मूल्य : 20/-
घोषणा पत्र संख्या : 153/2016-17

वर्ष : २
मार्च २०१८, विक्रमी सम्वत् २०७४/२०७५
सृष्टि सम्वत् १९६०८५३११८/९ दयानन्दाब्द १९४/१९५
अंक : ९

ओ३म्

।। कृण्वन्तो विश्वमार्यम् ।।

सत्य और ज्ञान से भरपूर आर्यसमाज नोएडा का मासिक मुखपत्र

विश्ववारा संस्कृति

मानवीय जीवन मूल्यों की संरक्षक पत्रिका

"सा प्रथमा संस्कृतिविश्ववारा"

नमो ब्रह्मणे नमस्ते वायो त्वमेव प्रत्यक्षं ब्रह्मासि। त्वामेव प्रत्यक्षं ब्रह्म वदिष्यामि ऋतं वदिष्यामि सत्यं वदिष्यामि। तन्मामवतु तद्वक्तारमवतु। अवतु माम्। अवतु वक्तारम्।।

ईश्वर का व्यापक ज्ञानस्वरूप पूज्य और सहज स्वभाव जानकर हम उसकी उपासना करें तथा जीवन में सदा सत्य का आचरण करें।

युग प्रवर्तक महर्षि दयानन्द सरस्वती
1824-1883

शहीद भगत सिंह
बलिदान : 23 मार्च

शहीद राजगुरु
बलिदान : 23 मार्च

शहीद सुखदेव
बलिदान : 23 मार्च

गणतंत्र काव्योत्सव के अवसर पर दीप प्रज्जवलित करते मुख्य अतिथि एवं कार्यक्रम अध्यक्ष और आयोजक मंडल।

गणतंत्र काव्योत्सव में मंचासीन कविगण एवं संचालन करते संयोजक जी।

ओ३म्

।। कृण्वन्तो विश्वमार्यम्।।

विश्ववारा संस्कृति

मानवीय जीवन मूल्यों की संरक्षक पत्रिका

संरक्षक
श्री आनंद चौहान, श्री सुधीर सिंघल
श्री रविन्द्र सेठ 'प्रधान'

प्रबंध संपादक
महामंत्री आर्य कै. अशोक गुलाटी

संपादक
आचार्य डॉ. जयेन्द्र कुमार

व्यवस्थापक
ओमकार शास्त्री

प्रकाशक और मुद्रक
स्वामी, मुद्रक, प्रकाशक एवं संपादक डॉ. जयेन्द्र कुमार द्वारा वत्स ऑफसेट, मुद्दा हाऊस, सी-ब्लॉक, बारात घर, चौड़ा रघुनाथपुर, सेक्टर-22, नोएडा से मुद्रित एवं आर्य समाज, बी-69, सेक्टर-33, नोएडा, गौतमबुद्धनगर से प्रकाशित किया।

Title Code : UPMUL-200652

घोषणा पत्र संख्या : 153/06.06/2016-17

मूल्य

एक प्रति : 20/- वार्षिक : 250/-
पांच वर्ष : 1100/- आजीवन : 2500/-

विदेश में वार्षिक शुल्क : 3100/-

अनुक्रमणिका

क्रम सं.	विषय	पृष्ठ
1.	संपादकीय : नवसंवत्सर आर्यसमाज	2
2.	यशस्वी जीवन का सार	3
3.	य आत्मदा बलदा...	4-5
4.	आर्य दर्शन और धर्म	6-7
5.	वेद कालीन शिक्षा पद्धति	8-9
6.	दयानन्द-गुण-गौरवम्	10
7.	भारतीया संस्कृति	11
8.	शहीदों को नमन...	12-13
9.	मर्यादा पुरुषोत्तम राम	14
10.	आर्य समाज स्थापना दिवस	15
11.	सुस्वास्थ्य : अदरक	22
12.	समाचार-सूचनाएं	23

पाठकवृंद : कृपया स्वयं समाज एवं राष्ट्र के उत्थान के लिए 'विश्ववारा संस्कृति' के आजीवन सदस्य बनकर जीवन पथ को पुष्पित, प्रफुल्लित और प्रमुदित करें। आपका चित्र पत्रिका में प्रकाशित होगा। आपके बहुमूल्य सुझावों का हम स्वागत करते हैं।

लेखकवृंद से अनुरोध है कि रचना मौलिक एवं अप्रकाशित हो, रचना का लेखन स्पष्ट और सुपाठ्य हो। दो प्रतियां उस रचनाकार को भेज दी जाएगी, जिनकी रचना प्रकाशित हुई है।

विज्ञापन दर

पिछला कवर पृष्ठ	:	5100 रुपये
कवर पृष्ठ नं.-2	:	3100 रुपये
कवर पृष्ठ नं.-3	:	2500 रुपये
पूरा पृष्ठ अंदर	:	1000 रुपये
आधा पृष्ठ अंदर	:	600 रुपये

'विश्ववारा संस्कृति' में सभी पद अवैतनिक हैं। प्रकाशित विचारों से संपादक का सहमत होना आवश्यक नहीं है। सभी विवादों का न्याय क्षेत्र गौतमबुद्धनगर होगा।

संपादकीय कार्यालय
आर्य समाज, बी-69,
सेक्टर-33, नोएडा- 201301
गौतमबुद्धनगर, (उ.प्र.)
दूरभाष : 0120-2505731,
9871798221

Web : www.aryasamajnoida.org, E-mail : info.aryasamajnoida33@gmail.com

संपादकीय...

।।ओ३म्।।

नवसंवत्सर आर्यसमाज स्थापना दिवस

ऋतुराज बसंत का आगमन होते ही समस्त प्रकृति बसंती बाना पहन लेती है। बागों में आम्रमंजरी की महक वृक्षों पर नवपल्लवों की शोभा नव विकसित पुष्पों पर भौरों की गुञ्जन मधुमक्खियों का माधुर्य मधुमास की मादकता को निरंतर बढ़ाता है। इसी समय सहृदय रसिकजन बसंत पंचमी का महोत्सव मनाते हैं तथा विविध रागों की चुनरिया ओढ़े प्रकृति का अभिनंदन होली के रंगों में रंगकर करते हैं। इसके तुरंत बाद चैत्र मास की पूर्णिमा के दिन भारतीय नवसंवत्सर का शुभारम्भ होता है-

'यथा चित्रा नक्षत्रेण युक्ता पौर्णमासी सा चैत्री यस्मिन् मासे सः चैत्रमासः' अर्थात् जिस पूर्णमासी को चित्रा नक्षत्र हो वह चैत्री कहलायेगी और जिसमें वह पड़ेगी वह चैत्रमास कहलायेगा।

'चैत्रमासि जगद् ब्रह्मा ससर्ज प्रथमेऽहनि। शुक्ल पक्षे समग्रन्त तदा सूर्योदयेसति।' अर्थात् चैत्र शुक्ल पक्ष के प्रथम दिन सूर्योदय के समय ब्रह्मा ने जगत् की रचना की। ब्रह्म दिन, सृष्टिसंवत्, वैवस्वतादि मन्वन्तरारम्भ-सत्ययुगादि-युगारम्भ, कलिसंवत्-विक्रमसंवत् चैत्र सुदिप्रतिपदा को ही आरम्भ होते हैं। इसी दिन सही अर्थों में नववर्ष मनाना चाहिए।

विक्रमसंवत् चैत्र शुक्ल प्रतिपदा के दिन आर्यसमाज की स्थापना नवीन भारत के इतिहास की सबसे बड़ी क्रांतिकारी घटना है। विक्रम की 19वीं शताब्दी में वृद्ध भारत की दशा अत्यंत शोचनीय थी। उस समय अनगिनत कपोलकल्पित विभिन्न नवीन मतमतान्तरों के आडम्बरों से भारतमाता पापमयी होकर दुर्गति को प्राप्त हो रही थी। अविद्या, अंधविश्वास, पाखण्ड, तांत्रिक जादू टोने के भ्रमजाल में फंसकर कभी वेद अनुयायी रहे भारतवासी निरंतर पतन के गर्त में गिरते जा रहे थे। पाखंडी पुजारियों का बोलबाला था, मंदिरों में भांग, चरस, शराब, मांस को परोसा जाता था। पशुबलियों से यज्ञ जैसे शुभकर्मों को भी दूषित कर दिया गया था। स्त्रियों का घोर अपमान, विधवाओं की दुर्गति तथा सतीप्रथा जैसी परम्पराओं ने देश को शर्मसार कर रखा था। दूसरी ओर गुलामी की जंजीरों में जकड़ी भारतमाता त्रासदी झेल रही थी। यूरोप की पाश्चात्य अपसंस्कृति हमारी संस्कृति को नष्ट करने पर उतारू थी। इन सब कारणों से आर्य जाति निरंतर घोर पतन की ओर जा रही थी। ऐसे में सर्वस्व त्यागी महर्षि दयानन्द सरस्वती ने मुंबई गिरगांव में डॉ. मानिक चन्द्र जी की वाटिका में चैत्र शुदि 5 संवत् 1932 के दिन आर्यसमाज की स्थापना की। आर्यसमाज की स्थापना से भारत का भाग्योदय हो गया। आर्य समाज के प्रयासों से देश आजाद हुआ, कुप्रथाओं का अंत हुआ, वेदों का उदय हुआ। पुनः वैदिक संस्कृति का परचम लहरा गया, आर्यसमाज के वैदिक सिद्धांतों का मार्ग ही सर्वश्रेष्ठ है, यह आर्यसमाज ने सिद्ध कर दिया।

■ **आचार्य डॉ. जयेन्द्र कुमार**

आर्यसमाज की स्थापना नवीन भारत के इतिहास की सबसे बड़ी क्रांतिकारी घटना है। विक्रम की 19वीं शताब्दी में वृद्ध भारत की दशा अत्यंत शोचनीय थी। उस समय अनगिनत कपोलकल्पित विभिन्न नवीन मतमतान्तरों के आडम्बरों से भारतमाता पापमयी होकर दुर्गति को प्राप्त हो रही थी। अविद्या, अंधविश्वास, पाखण्ड, तांत्रिक जादू टोने के भ्रमजाल में फंसकर कभी वेद अनुयायी रहे भारतवासी निरंतर पतन के गर्त में गिरते जा रहे थे। पाखंडी पुजारियों का बोलबाला था, मंदिरों में भांग, चरस, शराब, मांस को परोसा जाता था। पशुबलियों से यज्ञ जैसे शुभकर्मों को भी दूषित कर दिया गया था। स्त्रियों का घोर अपमान, विधवाओं की दुर्गति तथा सतीप्रथा जैसी परम्पराओं ने देश को शर्मसार कर रखा था। दूसरी ओर गुलामी की जंजीरों में जकड़ी भारतमाता त्रासदी झेल रही थी।

आर्यसमाज, आर्ष गुरुकुल, वानप्रस्थाश्रम नोएडा द्वारा समस्त जनों को नव संवत्सर-2075 एवं आर्यसमाज स्थापना दिवस और रामनवमी की हार्दिक शुभकामनाएं

- प्रबंध संपादक

यशस्वी जीवन का सार

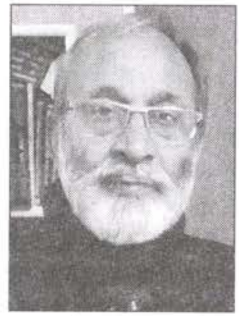

प्रबंध संपादक
महामंत्री आर्य कै. अशोक गुलाटी

हमारे मन में अनेक प्रश्न जीवन के संबंध में उठते हैं कि हमारा जीवन कैसा होना चाहिए। जीवन के संबंध में ऋषियों ने कहा है- वेदवित् होना चाहिए, आदर्शवादी होना चाहिए, श्रेष्ठ पवित्र और परोपकारी होना चाहिए। वह तब सम्भव हो सकता है जब हम सच्चे मन से परमपिता परमात्मा की भक्ति करें।

क्योंकि इस सृष्टि का अधिपति भगवान हैं। उसने हर वस्तु को बनाकर उसकी सीमा व मर्यादाएं भी निश्चित कर दी हैं। हर पदार्थ एवं प्राणी अपनी नियत मर्यादा में रहकर ही ईश्वरीय प्रयोजन को पूरा करता है। एक मनुष्य ही है जो अपनी बुद्धि एवं प्रकृति का दुरुपयोग अधिक करता है और कुमार्गगामी बनता है, धर्म का सारा ढांचा, सारी परंपराएं, मान्यताएं और आस्थाएं इसी प्रयोजन के लिए है कि मनुष्य अपनी नियत निर्धारित मर्यादा के भीतर रहकर ही जीवनयापन करे।

धर्म का आधार है- आस्तिकता, ईश्वर विश्वास। जब मनुष्य ईश्वर की सर्वव्यापकता में विश्वास रखकर उसके अनुशासन से अपने कर्मों का नियोजन करता है तो उसका मन उसकी दुष्प्रवृत्तियों पर अंकुश रखने में समर्थ होता है, सर्वव्यापी ईश्वर की दृष्टि से हमारा कोई भी आचरण या भाव छिप नहीं सकता और समय-समय पर वह न्यायकारी, घट-घटवासी प्रभु उसका दण्ड भी देता रहता है।

समाज की आंखों में धूल झोंकी जा सकती है पर उससे कुछ भी छिपाना संभव नहीं है। यह मान्यता हमें पाप कर्मों से बचाती है। हमारी अधिकांश दुष्प्रवृत्तियां इसीलिए चलती रहती हैं कि राजदंड या समाज दंड से हम चतुरतापूर्वक बच सकते हैं।

परंतु ईश्वर के सामने ऐसी चतुरता नहीं चल पाती। इसी आधार पर मनुष्य पाप से डरता है और मर्यादाओं में रहने तथा सज्जनोचित सभ्य जीवन जीने के लिए विवश होता है। उसी आत्मा, मन और शरीर तीनों शुद्ध और पवित्र बनते हैं।

आज हर दिशा में विकृतियों की भरमार है। आस्तिकता भी विकृत हो गयी है। लोग मान बैठे हैं कि थोड़ी सी चापलूसी करने या भेंट-पूजा की छोटी-मोटी रिश्वत देकर ईश्वर को अपना पक्षपाती बनाया जा सकता है और फिर अयोग्य होते हुए भी बड़ी-बड़ी उपलब्धियां प्राप्त की जा सकती हैं तथा पापों के दंड से बचने की छूट भी पाई जा सकती है इसी दुर्भावना के कारण चारों ओर लोग दुष्कर्मों में लगे हुए हैं और अपना विनाश कर रहे हैं। इस विडंबना से छुटकारा पाने के अलावा कोई और चारा ही नहीं है।

अनुशासन के बिना जीवन में सफलता प्राप्त कर पाना संभव ही नहीं है। परमेश्वर ने हमें समाज में सत्कर्मों के द्वारा सबकी उन्नति में सहयोग देने के लिए ही यह नर तन प्रदान किया है इस ईश्वरीय अनुशासन का पालन करना हम सबका पुनीत कर्तव्य है।

इसके लिए मनुष्य को प्रतिदिन थोड़ा समय निकाल कर ईश्वर की उपासना करनी चाहिए। परमात्मा के गुणों का चिंतन करते हुए उन्हें अपनी आत्मा में धारण करने का प्रयास करते रहना चाहिए। उसकी मंगलमय छाया में रहने वाले को संसार में कोई संताप नहीं रहता और उसके लिए मृत्यु भी अमृत के समान बन जाती है। वह आत्मस्वरूप परमात्मा हमारे उत्तम कर्मों के आधार पर हमें अमर कर देता है। यशस्वी जीवन का यही रहस्य है।

सांसारिक जीवन में सत्य के दो रूप होते हैं, एक सत्य वह है जिसे हम भौतिक सत्य कहते हैं। कहने का मतलब यह है कि यदि हम अपने जीवन में लक्ष्य की प्राप्ति करते हैं तो उससे मिलने वाली खुशी को सत्य मान बैठते हैं। वास्तव में वह खुशी नहीं है क्योंकि इससे हमारा अंर्तमन खुश नहीं होता है दरअसल हमारा अंर्तमन खुश होता है ईश्वर की सच्ची प्रार्थना से। सच तो यह है कि ईश्वर से प्रीति लगाना ही अंतिम सत्य है क्योंकि मोक्ष मिलने का एक मार्ग यह भी है।

साधना में शांति तब आती है जब श्रद्धा और विश्वास, संयम और सदाचार भी समुचित मात्रा में मौजूद हो। दैनिक जीवन की पवित्रता ही इस बात की कसौटी है कि किसी ने वास्तविक तत्व ज्ञान को अपने दिल में बसाया है या नहीं। ईश्वर सर्वव्यापी है, विश्व के कण-कण में समाया हुआ है। उसे देखने के लिए कहीं दूर जाने की आवश्यकता नहीं। जो कमियां हमारे और ईश्वर के बीच दीवार बनकर खड़ी है उन्हें गिरा दिया जाए तो अत्यंत निकट अपनी आत्मा में निवास करने वाले परमपिता परमात्मा के तत्काल दर्शन हो सकते हैं।

OO

य आत्मदा बलदा

स्व. प्रो. उमाकान्त उपाध्याय

इस अंक से ईश्वर स्तुति, प्रार्थना, उपासना के तीसरे मंत्र की व्याख्या प्रस्तुत की जा रही है, मनन चिन्तन कर जीवन सफल करें।

- **प्रबंध संपादक**

'य आत्मदा बलदा' मंत्र पर चिंतन-स्वाध्याय के लिए पाठक इस मंत्र का पूर्णपाठ देखें-

य आत्मदा बलदा यस्य विश्व उपासते प्रशिषं यस्य देवाः। यस्य छायाऽमृतं यस्य मृत्युः कस्मै देवाय हविषा विधेम।।

- यजु. २५-१३

मंत्र के स्वाध्याय-चिंतन के लिए इसे निम्न रूप से विभक्त कर लेते हैं-

१. य: (परमात्मा) आत्मदा= जो परमेश्वर आत्मज्ञान के दाता हैं। २. (य: परमात्मा) बलदा= जो परमेश्वर शरीर आत्मा और समाज के बल के देने वाले हैं। ३. यस्य प्रशिषं विश्वेदेवा: उपासते= जिस परमेश्वर के प्रत्यक्ष सत्य-स्वरूप शासन न्याय अर्थात् शिक्षा को विद्वान लोग मानते हैं, जिसकी विद्वान् देव पुरुष उपासना करते हैं।

चिंतन रमणीयता की दृष्टि से- जो परमेश्वर की उपासना करते हैं और जो परमेश्वर के न्याय-शिक्षा पर चलते हैं, वे देव, दिव्य गुण विशिष्ट हो जाते हैं।

४. यस्य छाया अमृतम्= जिसका आश्रय मोक्ष सुखदायक है। ५. यस्य (अ-छाया) मृत्युः= सुखस्वरूप, सकलज्ञान के देने हारे परमात्मा की प्राप्ति के लिए आत्मा और अंत:करण से उसकी भक्ति करें अर्थात् उसी की आज्ञा का पालन करने में सदा तत्पर रहें। अब इन खंडों का पृथक-पृथक थोड़ा चिंतन प्रस्तुत करते हैं-

१. **य आत्मदा** : परमेश्वर हमें आत्मज्ञान देते हैं, अत: वे आत्मदा हैं।

आत्मज्ञानं ददाति, तस्माद् आत्मदा। आत्मा तो हम स्वयं हैं, अत: कोई हमें आत्मा का दान करे, यह तो ऊटपटांग जैसा है। हां, हम आत्मा को भूले रहते हैं, हमें अपना भी ज्ञान नहीं होता कि हम कौन हैं। परम प्रभु हमें आत्म अनुभूति कराते हैं, आत्मज्ञान देने वाले हैं। अत: हमारे आत्मदा प्रभु परमेश्वर हैं।

हम क्या है, कौन हैं? यह चिरंतन प्रश्न है, बड़ा अद्भुत प्रश्न है। हम क्या है? इस प्रश्न का उत्तर नास्तिक आस्तिक अपने-अपने ढंग से देते हैं। चार्वाक हों या डार्विन, मार्क्स हों या कोई अन्य भौतिकतावादी, सभी की धारणा है कि हम मिट्टी हैं, मिट्टी के ढेले हैं, पृथ्वी, जल, वायु, अग्नि आदि का संयोग हो गया और हम बन गये। हालावादी युग के उच्छृंखल युवक खूब लहरा-लहरा कर गाते, मटकते, निरुद्देश्य से चहल कदमी करते-

'माटी का तन, माटी का मन। क्षण भर जीवन, मेरा परिचय।।'

भाव यह है कि हम शराब की मिट्टी की प्याली की तरह हैं। आदर्श, आध्यात्मिकता, आत्मोत्थान, सब मिथ्या, घपला मात्र है। खाओ, पीओ, मौज करो- 'Eeat, drink and be merry.' इतना ही जीवन का तत्व, सार, निचोड़ है। बाकी सब व्यर्थ है। भौतिकतावादी आत्मा को ही नहीं मानते तो उनके लिए आत्मज्ञान का प्रश्न ही नहीं उठता। स्वामी शंकराचार्य जीव को ब्रह्म 'अहं ब्रह्मास्मि' बताते हैं। गोस्वामी तुलसीदास जी उसी लाइन पर चलकर 'ईश्वर अंश जीव अविनाशी' के गीत गाते हैं। कई पौराणिक मान्यता के लोग प्रात: उठते ही जपते हैं-

'पापोऽहं पापकर्माऽहं, पापात्मा पाप सम्भवः।'

अर्थात् मैं पापी हूं, पाप कर्म करने वाला हूं, मैं पापात्मा हूं और मैं पाप से पैदा हुआ हूं। ईसाई सिद्धांतों की सीधी ही घोषणा है- 'We are borm sinners'

चितन रमणीयता की दृष्टि से- जो परमेश्वर की उपासना करते हैं और जो परमेश्वर के न्याय-शिक्षा पर चलते हैं, वे देव, दिव्य गुण विशिष्ट हो जाते हैं। यस्य छाया अमृतम्= जिसका आश्रय मोक्ष सुखदायक है। यस्य (अ-छाया) मृत्युः= सुखस्वरूप, सकलज्ञान के देने हारे परमात्मा की प्राप्ति के लिए आत्मा और अंतःकरण से उसकी भक्ति करें अर्थात् उसी की आज्ञा का पालन करने में सदा तत्पर रहें। अब इन खंडों का पृथक-पृथक थोड़ा चितन प्रस्तुत करते हैं- य आत्मदा : परमेश्वर हमें आत्मज्ञान देते हैं, अतः वे आत्मदा हैं। आत्मज्ञानं ददाति, तस्माद् आत्मदा। आत्मा तो हम स्वयं हैं, अतः कोई हमें आत्मा का दान करे, यह तो ऊटपटांग जैसा है। हां, हम आत्मा को भूले रहते हैं, हमें अपना भी ज्ञान नहीं होता कि हम कौन हैं। परम प्रभु हमें आत्म अनुभूति कराते हैं, आत्मज्ञान देने वाले हैं। अतः हमारे आत्मदा प्रभु परमेश्वर हैं। हम क्या है, कौन हैं? यह चिरंतन प्रश्न है, बड़ा अद्भुत प्रश्न है। हम क्या है? इस प्रश्न का उत्तर नास्तिक आस्तिक अपने-अपने ढंग से देते हैं। चार्वाक हों या डार्विन, मार्क्स हों या कोई अन्य भौतिकतावादी, सभी की धारणा है कि हम मिट्टी हैं, मिट्टी के ढेले हैं, पृथ्वी, जल, वायु, अग्नि आदि का संयोग हो गया और हम बन गये। हालावादी युग के उच्छृंखल युवक खूब लहरा-लहरा कर गाते, मटकते, निरुद्देश्य से चहल कदमी करते- 'माटी का तन, माटी का मन। क्षण भर जीवन, मेरा परिचय।।' भाव यह है कि हम शराब की मिट्टी की प्याली की तरह हैं। आदर्श, आध्यात्मिकता, आत्मोत्थान, सब मिथ्या, घपला मात्र है।

हम सब जन्म से ही, पैदाइशी पापी हैं।

इन सबके विपरीत प्रस्तुत मंत्र में परमेश्वर को 'आत्मदा' आत्मज्ञान का दाता कहा गया है। वेदमंत्रों में सैकड़ों प्रसंगों पर परमेश्वर जीव का स्वरूप, उसके गुणधर्म, प्रकृति-प्रवृत्ति आदि का उपदेश देते हैं। एक दो मंत्र उदाहरणार्थ प्रस्तुत हैं।

'वायुरनिलममृतमथेदं, भस्मान्तं शरीरम्।' -यजु. ४०-१५

भाव यह है कि हमारा शरीर नश्वर, 'भस्मान्त' अंत में भस्म बन जाने वाला है और हमारा आत्मा अमृत, न मरने वाला, अमर है।

२. **दृष्टवा रूपे व्याकरोत् सत्यानृते प्रजापतिः। अश्रद्धामनृतेऽदधाच्छ्रद्धां सत्ये प्रजापतिः।।** -यजु. १९-७७

भाव यह है कि प्रजापति परमेश्वर ने संसार में सत्य और अनृत रूपों को देखकर जीवात्मा को यह प्रवृत्ति प्रदान कर दी कि आत्मा को सत्य में श्रद्धा और अनृत में अश्रद्धा स्वत: होने लगती है।

स्वामी दयानन्द जी ने अपने युगान्तरकारी ग्रंथ सत्यार्थ प्रकाश की भूमिका में जीवात्मा के संबंध में लिखा है- **'मनुष्य का आत्मा सत्यासत्य का जानने वाला है।'**

सैकड़ों संहिता मंत्रों को आधार मानकर उपनिषद् और दर्शन शास्त्र के ऋषियों ने आत्मा के गुणधर्म प्रकृति प्रवृत्ति का बड़ा विस्तृत अध्ययन प्रस्तुत किया है। मूलत: आत्मदा परमेश्वर ने जो आत्मज्ञान वेदों में दिया है, ऋषियों ने उसी वेद में वर्णित आत्मज्ञान को उपनिषदों और दर्शनों में पल्लवित किया है।

२. **(यः परमात्मा) बलदा** : बलं ददाति इति बलदा। परमेश्वर हमें, सत्य को, आदर्श को, बल देते हैं। अत: प्रभु को बलदा हमें, सत्य को, आदर्श को, बल देते हैं। अत: प्रभु को बलदा कहा गया है। स्वामी दयानन्द जी ने बलदा की व्याख्या में 'शरीर आत्मा और समाज के बल का देने हारा, ऐसा लिखा है। इसका अर्थ हुआ कि बल चाहे शरीरिक हो या आत्मिक या फिर सामाजिक, सभी प्रकार के बलों का उद्गम, आदि स्रोत परमेश्वर ही हैं। प्रत्येक प्रकार के बल पर थोड़ा-थोड़ा चिंतन करते हैं-

शारीरिक बल : 'शरीरमाद्यम् खलु धर्म साधनम्' हमारा शरीर हमारे धर्म का आदि-प्रथम साधन है। निर्बलता पाप है। शरीर की अवमानना भर्त्सना करने वाले संत भी हुए हैं। उन्होंने कहा- 'यह तन विष की बेलरी।' किंतु वास्तविकता यही है कि हमार शरीर हमारे धर्म का, हमारे कर्म का सबसे प्रथम साधन है। शरीर से निर्बल या अस्वस्थ व्यक्ति धर्म, कर्म सबके लिए असमर्थ है। अत: शरीर बलवान् होना चाहिए। अब अगला प्रश्न यह है कि बल आता कहां से है। सामान्यत: यह धारणा है कि शरीर का बल भौतिक है। किंतु ध्यान रखना चाहिए कि बल केवल भौतिक नहीं है। शरीर बल में भौतिकता के साथ मानसिकता भी जुड़ी है- शरीरबल = भौतिकबल + मानसिक बल।

शरीर बल के लिए उचित आहार, विहार, निद्रा, ब्रह्मचर्य, संयम, नियम, व्यायाम, परिश्रम अनेक कारण हैं। 'त्रयोऽस्कन्धा: शरीरस्य भोजनं निद्रा ब्रह्मचर्यमिति।' हमारा भोजन विश्राम और संयम सदाचार शरीर बल पैदा करता है। थोड़ा गंभीरता से चिंतन करें- गाय का घी-दूध, भैंस का घी-दूध, बकरी का घी-दूध, इनका प्रोटीन, मसूर, मूंगफली, पेशावरी बादाम, सोयाबीन, सबका प्रोटीन एक ही नहीं है। महीना बीस दिन नियमित जीवन, संयत सोना, जागना, दश पन्द्रह दिनों का ब्रह्मचर्य पालन शरीर में परिवर्तन लाने लगता है। श्वास को भरकर, प्राणों को साधकर हम किसी काम में बल लगाते हैं। शारीरिक बल और प्राणों का संबंध, शारीरिक बल और मानसिकता, उत्साह आदि का संबंध मनुष्यकृत नहीं है। यह सब बलदा प्रभु की ही व्यवस्था है। प्रभु ने हमारे शरीर को 'देवानां पूरयोध्या' अजेय देवपुरी अयोध्या बताया है।

हम प्रभु प्रदत्त नियमों का पालन करें और परमप्रभु हमें स्वास्थ्य और बल देते हैं। वास्तविक बलदा तो परमेश्वर ही हैं, शेष घी, दूध, बादाम, मेवे आदि तो तब हमें बल प्रदान करते हैं, जब हम प्रभु के नियम, अनुशासन, व्यवस्था के अनुकूल जीवन यापन करते हैं। सो प्रभु शारीरिक बलदा हैं।

आत्मा का बल : आत्मा का पल प्रभु भक्ति, प्रभु का भरोसा, सत्यनिष्ठा, अपने आदर्शों के प्रति सत्यनिष्ठा से आता है। छलिया, स्वार्थी, क्रूर के पास आत्मबल नहीं होता। शूर और क्रूर दो शब्दों पर ध्यान दीजिए।

शेर शूर नहीं होता, वह क्रूर होता है। शेर बकरी पर हमला करता है। बकरी निर्बल है, शेर आग की लपट देखते ही दुम दबाकर भाग जाता है। क्रूर का कोई आदर्श नहीं, शूर का आदर्श उसकी सत्य की निष्ठा है-

'था सब जगत विरोधी, फिर भी ऋषि दयानन्द, वैदिक धरम का झंडा, फहरा गया अकेला। यह मत कहो कि जग में कर सकता क्या अकेला।।'

आत्मा का बल शरीर के बल से, तोप तलवार से, राज दरबार से, सबसे अधिक बड़ा बल है।

स्वामी दयानन्द जी अनेकों बार अंग्रेज शासकों से, उच्च अधिकार सम्पन्न राजपुरुषों से, देशी राजेमहाराजों से, उच्च पदस्थ पादरी मौलवी पंडितों से, निर्द्वन्द्व भिड़ जाते थे। यह उनका आत्मबल ही था। बरेली में जिला अधिकारी, बड़े पादरी के सामने ऋषि ने जो घन गर्जन किया, वह उनका आत्मबल ही था, इसी ने मुंशीराम को आदर्शों की ओर आकृष्ट किया था।

(शेष अगले अंक में) ○○

आर्य दर्शन और धर्म

डा. दीवान चन्द, डी.लिट.

(गतांक से आगे...)

योग का उद्योग केवल उन लोगों के लिए है, जो नियमों और यमों के प्रयोग से अपने जीवन में संयम बना चुके हों। सांख्य दर्शन में तत्व-ज्ञान को दुखों की अत्यंत निवृत्ति का साधन बताया है; वैशेषिक एक पग आगे जाता है, और इसे नि:श्रेयस प्राप्ति का साधन बताता है। यह ज्ञान छ: पदार्थों का बोध है। 'पदार्थ' किसी 'पद' या शब्द का विषय (अर्थ) है। पारिभाषिक अर्थ में यह 'परतम जाति' या ऐसा 'विशेष' है, जिसके ऊपर कोई सामान्य नहीं।

वैशेषिक दर्शन में 'परतम जातियों' की बाबत विचार किया गया है। पश्चिम में यह विचार का विषय बना रहा है। अरस्तू ने परतम जातियों की सूची प्रस्तुत की, जिसमें द्रव्य को प्रथम स्थान दिया। उसकी शेष परतम जातियां वास्तव में 'गुण' के आकार की हैं।

गुणों के भेद से ही हम विविध द्रव्यों में भेद करते हैं। बकरी, घोड़ा, चांदी, त्रिकोण और फूल में गुणों के भेद पर ही भेद किया जाता है। पश्चिम में लाइबनिज ने कहा कि 'गुण' नहीं, अपितु 'क्रिया' द्रव्य का विशेषण है।

भौतिक पदार्थों में 'विस्तार' प्रमुख गुण है। उसने विस्तार के साथ प्रकृति के अस्तित्व को भी अस्वीकार किया और सारी सत्ता को चेतनों (चिद्‌बिंदुओं) के रूप में देखा। वैशेषिक दर्शन में द्रव्य के साथ गुण और क्रिया दोनों को परतम जातियों का पद मिला है। यह तीन प्रथम 'पदार्थ' है। इन तीनों की स्वाधीन सत्ता है। शेष तीन 'पदार्थ' बुद्धि की देन है। सूत्र १:२:३ में कहा है-

'सामान्य' और 'विशेष' का भेद बुद्धि की अपेक्षा से होता है। हम गौ, घोड़ा, हाथी, कबूतर, कौवा आदि जन्तुओं को देखते हैं। उन्हें विविध उपजातियों में रखते हैं और सब उपजातियों को पशु-पक्षी जाति के तले रखते हैं। जगत में तो हरेक प्राणी एक वस्तु है, बुद्धि उन्हें उपजातियों और जातियों में व्यवस्थित देखती है। समवाय संबंध द्रव्यों में नहीं होता, परंतु किसी द्रव्य और उसकी कृतियों में होता है। विशेष रूप, रंग, कोमलता आदि गुण किसी द्रव्य में पाये जाते हैं, स्वाधीन स्थिति में नहीं विचरते। मैं बाजार में जाता हूं और दुकानदार से कहता हूं- मुझे कुछ मिठास चाहिए। वह कहता है- मिठास तो मेरे पास है नहीं, मीठी वस्तुएं हैं, वह दे सकता हूं।

वैशेषिक के ६ पदार्थों में पहले तीन तात्विक दृष्टिकोण और शेष तीन मीमांसा के दृष्टिकोण की देन है।

पूर्व मीमांसा : भारतीय दर्शन में मीमांसा के दो भाग हैं- पूर्व मीमांसा और उत्तर मीमांसा। उत्तर मीमांसा वेदान्त के नाम से प्रसिद्ध है। दोनों भागों का आरम्भ इस तरह होता है-

पूर्व मीमांसा: और अब धर्मजिज्ञासा

उत्तर मीमांसा : और अब ब्रह्म जिज्ञासा

वर्तमान अध्ययन में हमार विशेष संबंध पूर्व मीमांसा से है। दूसरे सूत्र में धर्म के स्वरूप की बाबत कहा है- चोदना-लक्षण वाला अर्थ धर्म है। चोदना का अर्थ प्रेरणा, उपदेश है।

इस कथन के भाव को समझने के लिए हमें 'तथ्य' और 'मूल्य' में भेद करना होता है। वाक्य निर्णय का शाब्दिक प्रकटन है। निर्णय दो प्रकार का होता है। तर्क के निर्णय में दो प्रत्ययों के संयोग का असंयोग की बाबत कहा जाता है। 'पृथ्वी गोल है', त्रिकोण बुद्धिवंत नहीं। यह निर्णय सत्य या असत्य होते हैं। दूसरे प्रकार का निर्णय न्यायाय में दिया जाता है।

यह किसी अभियुक्त को दोषी या निर्दोष ठहराता है। नैतिक निर्णय तर्क के निर्णय से नहीं, अपितु न्यायालय के निर्णय से मिलता है, यह किसी आचार या आचरण को शुभ या अशुभ, दोषयुक्त या दोषरहित बताता है।

यहां 'नियम' का प्रत्यय हमारे समक्ष आ जाता है। हम प्राकृतिक नियम, राज-नियम और नैतिक का जिक्र करते हैं। प्राकृतिक नियम अबाध है। गंगा गंगोत्तरी से चलती है और बंगाल की खाड़ी में जा गिरती है। यह ऐसा करने में विवश है। पृथिवी की

सांख्य दर्शन में तत्व-ज्ञान को दुखों की अत्यंत निवृत्ति का साधन बताया है; वैशेषिक एक पग आगे जाता है, और इसे निःश्रेयस प्राप्ति का साधन बताता है। यह ज्ञान छः पदार्थों का बोध है। 'पदार्थ' किसी 'पद' या शब्द का विषय (अर्थ) है। पारिभाषिक अर्थ में यह 'परतम जाति' या ऐसा 'विशेष' है, जिसके ऊपर कोई सामान्य नहीं। वैशेषिक दर्शन में 'परतम जातियों' की बाबत विचार किया गया है। पश्चिम में यह विचार का विषय बना रहा है। अरस्तू ने परतम जातियों की सूची प्रस्तुत की, जिसमें द्रव्य को प्रथम स्थान दिया। उसकी शेष 'परतम जातियों की सूची प्रस्तुत की, जिसमें द्रव्य को प्रथम स्थान दिया। उसकी शेष परतम जातियां वास्तव में 'गुण' के आकार की हैं। गुणों के भेद से ही हम विविध द्रव्यों में भेद करते हैं। बकरी, घोड़ा, चांदी, त्रिकोण और फूल में गुणों के भेद पर ही भेद किया जाता है। पश्चिम में लाइबनिज ने कहा कि 'गुण' नहीं, अपितु 'क्रिया' द्रव्य का विशेषण है

'इन्द्रियों और बाह्य पदार्थों के संयोग से पुरुष को जो ज्ञान प्राप्त होता है, वह प्रत्यक्ष है। यह ज्ञान धर्म में प्रमाण नहीं होता, क्योंकि उसमें इन्द्रियों का सम्पर्क पदार्थों से होता है।' धर्म के संबंध में किसी व्यक्ति का निर्णय असंदिग्ध निर्णय नहीं हो सकता। जैमिनि इसे स्वीकार करता है और कहता है कि धर्म के आदेश व्यापक और न बदलने वाले है, और वेद में मिलते हैं। वेद का प्रमाण किसी अन्य प्रमाण की अपेक्षा नहीं करा, वेद वाक्य स्वतः प्रमाण है। पांचवें सूत्र में भी कहा है कि धर्म का यथार्थ ज्ञान प्राप्त नहीं होता, यह वेद का उपदेश है जिसमें किसी प्रकार का दोष या विरोध नहीं। अपने मत के समर्थन में जैमिनि यह भी कहता है कि उत्तर मीमांसा में बादरायण ने भी यही कहा है। ज्ञान और कर्म : धर्म अभ्युदय और निःश्रेयस की प्राप्ति का साधन है। सांख्य ने एक प्रकार के ज्ञान को दुखों की अत्यंत निवृत्ति का साधन बताया

आकर्षण शक्ति जल को ऊपर से नीचे ले जाती है। फल वृक्ष का भाग बना रहे तो ऊपर रहता है; वृक्ष से अलग होने पर नीचे आ गिरता है। राज-नियम नागरिकों को नियत व्यवस्था में रखने के लिए निर्मित होता है। इसके उल्लंघन करने वाले को दंड देने की व्यवस्था होती है। यह आदेश होता है, जिसकी उपेक्षा हो सकती है। नैतिक नियम न तो प्राकृत नियम की तरह अबाध स्थिति है, न राजनियम की तरह आदेश है; यह चोदना का रूप है। प्राकृत नियम तथ्यात्मक है, ऐसा सदा होता ही है। राजनियम 'ऐसा करना पड़ेगा' का रूप धारण करता है। नैतिक नियम इतना ही कहता है- 'ऐसा करना चाहिए।' 'चाहिए' और 'है' में मौलिक भेद है। धर्म 'चोदना' है; हितकर उपदेश है।

विज्ञान की विविध शाखाएं वास्तविकता का अध्ययन करती हैं। भौतिकी बताती है कि प्रकृति की क्रिया कैसी होती है। जीवन-विद्या बताती है कि जीवन का विकास कैसे होता है। मनोविज्ञान मनुष्य के मन की बनावट और क्रिया की बाबत बताता है, समाज-शास्त्र बताता है कि व्यक्ति समाज के सदस्य की स्थिति में कैसे विचरता है। विकासवादी स्पेन्सर ने कहा कि जो नियम प्रकृति के विकास में लागू होता है, वही नैतिक विकास में भी लागू होता है। जीवन विद्या के भक्त कहते हैं कि नीति जीवन को लंबाई और चौड़ाई में विकसित करना ही है।

भोगवादी कहता है कि व्यक्ति अपनी प्रकृति से सुख की प्राप्ति का यत्न करता है, यही उसका कर्तव्य है। समाजवादी कहता है कि व्यक्ति का कर्तव्य समाज में व्यवस्था बनाये रखना है। यह सब विचार 'है' और 'चाहिए' में भेद नहीं करते, इनके मतानुसार तथ्य से धर्म निकल सकता है। पूर्व मीमांसा के अनुसार ऐसा नहीं हो सकता, धर्म चोदना रूप है। यह इस दर्शन की मौलिक धारणा है।

तथ्य का ज्ञान प्रत्यक्ष से होता है, या उस निर्दोष अनुमान से जो प्रत्यक्ष पर आधारित होता है। प्रत्यक्ष किसी इन्द्रिय और बाह्य पदार्थ के स्पष्ट सम्पर्क का परिणाम होता है। धर्म इन्द्रियों का विषय ही नहीं, इसलिए प्रत्यक्ष इसमें प्रमाण नहीं हो सकता। सूत्र ४ में इसे स्पष्ट शब्दों में कहा है-

'इन्द्रियों और बाह्य पदार्थों के संयोग से पुरुष को जो ज्ञान प्राप्त होता है, वह प्रत्यक्ष है। यह ज्ञान धर्म में प्रमाण नहीं होता, क्योंकि उसमें इन्द्रियों का सम्पर्क पदार्थों से होता है।' धर्म के संबंध में किसी व्यक्ति का निर्णय असंदिग्ध निर्णय नहीं हो सकता।

जैमिनि इसे स्वीकार करता है और कहता है कि धर्म के आदेश व्यापक और न बदलने वाले है, और वेद में मिलते हैं। वेद का प्रमाण किसी अन्य प्रमाण की अपेक्षा नहीं करा, वेद वाक्य स्वत: प्रमाण है। पांचवें सूत्र में भी कहा है कि धर्म का यथार्थ ज्ञान प्राप्त नहीं होता, यह वेद का उपदेश है जिसमें किसी प्रकार का दोष या विरोध नहीं। अपने मत के समर्थन में जैमिनि यह भी कहता है कि उत्तर मीमांसा में बादरायण ने भी यही कहा है।

ज्ञान और कर्म : धर्म अभ्युदय और नि:श्रेयस की प्राप्ति का साधन है। सांख्य ने एक प्रकार के ज्ञान को दुखों की अत्यंत निवृत्ति का साधन बताया। इस निवृत्ति को अभ्युदय का रूपान्तर समझ सकते हैं। वैशेषिक ने एक प्रकार के ज्ञान को नि:श्रेयस प्राप्ति का साधन बताया। दर्शन की दोनों शाखाओं ने ज्ञान को प्रमुख पद दिया। पूर्वमीमांसा का दृष्टिकोण इसके विपरीत है। वह कर्म को प्रमुख पद देता है। किसी कर्म के करने के लिए आवश्यक है कि हम उसके मूल्य को समझें और यह जानें कि उसे करने के उचित उपाय क्या है।

ज्ञान मूल्यवान है, परंतु इसका मूल्य साधन का है। मीमांसा में कर्म को प्राय: कर्मकांड के अर्थ में लिया गया है। यज्ञ करने में सम्पत्ति का त्याग करना होता है। यह त्याग गृहस्थ के लिए संभव है। वानप्रस्थी को तो पिछली कमाई की बचत पर बुरा-भला गुजारा करना होता है और संन्यासी के पास तो अपना कुछ होता ही नहीं। कर्म (कर्मकांड) की प्राथमिकता का परिणाम यह है कि जैमिनी की दृष्टि में गृहस्थ का स्थान आश्रमों में सर्वोपरि है। कर्मकांडी गृहस्थी का पद संन्यासी के पद से ऊंचा है।

(शेष अगले अंक में) ○○

वेद कालीन शिक्षा पद्धति

शिक्षा संस्था में गुरु तथा शिष्य शिक्षा के आधार स्वरूप होते हैं। वैदिक शिक्षा पद्धति में भी शिक्षार्थी शिक्षा का केंद्र माना जाता था। वैदिक ऋषियों के अनुसार बालक के व्यक्तित्व को तीन प्रकार के संस्कार प्रभावित करते हैं। 1. पूर्वजन्म संस्कार, 2. माता-पिता के संस्कार तथा 3. पर्यावरण जन्य संस्कार।

शिक्षा के द्वारा इन तीनों प्रकार के संस्कारों में संतुलन स्थापित किया जाता है। वेद कालीन शिक्षा पद्धति के सहज सुरम्य परिवेश में पर्वत की उन्नताकार श्रृंखलाओं तथा कलकल नाद करती हुई अजस्त्र प्रवाह माना नदी की धाराओं के समीप को जाती थी। इस प्रकार के नैसर्गिक प्राकृतिक वातावरण से शिष्य का स्वत: ही प्रकृति के साथ सहज संबंध स्थापित हो जाया करता था, जिससे उनमें नव स्फूर्ति एवं उत्साह का संचार होता था।

वेदकालीन शिक्षा पद्धति गुरुकुलीय प्रणाली पर आधारित थी। गुरुकुल का शाब्दिक अर्थ है- गुरु का कुल। इसमें कुल शब्द का तात्पर्य है एक लघुकाय पारिवारिक इकाई से निकलकर विशालकाय परिवार का अंग बन जाना। इस प्रकार की शिक्षा पद्धति में बालक का एक परिवार के स्थान पर सामाजिक परिवार में पालन पोषण किया जाता था। इस प्रकार की व्यवस्था के तीन सोपान थे- 1. माता-पिता का कुल, 2. गुरुकुल तथा 3. सामाजिक कुल।

गुरुकुल में निवास करते हुए गुरु तथा शिष्य के मध्य निकटतम संबंध स्थापित हो जाया करता था। गुरुकुल में निवास काल में शिक्षार्थी को पुन: तीन प्रक्रियाओं से निकलना पड़ता था- आश्रमवास, उपनयन तथा ब्रह्मचर्य व्रत धारण करना। गुरुकुल में प्रवेश करने के साथ ही शिक्षार्थी को आलस्य का परित्याग करके श्रमपूर्ण जीवन को मूलरूप से स्वीकार करना होता था।

गुरुकुलीय शिक्षा प्रणाली तप पर आश्रृत होने के कारण गुरुकुल में निवास करने की अवधि में शिष्य का जीवन तप: प्रधान होता था। अथर्ववेद के एकादश कांड के तृतीय अनुवाक के पंचम सूक्त के 26 मंत्र ब्रह्मचर्य पर केंद्रित है। इनमें स्पष्ट किया गया है कि ब्रह्मचर्य रूपी तपस्या को धारण करने वाला प्रजापलन में निपुण राजा ब्रह्मचर्य के कारण आचार्य से तथा विद्या की अभिवृद्धि के लिए ब्रह्मचारी से स्नेह करता है-

ब्रह्मचर्येण तपसा राजा राष्ट्र विरक्षति।
आचार्यो ब्रह्मचर्येण ब्रह्मचारिणमिच्छति।।

– अथर्ववेद ११/३/५/१७

इसी वेद में गुरु-शिष्य संबंध को निकटतम तथा परस्पर सह संबंद्ध बतलाया है। स्व शिष्य को शिक्षा प्रदान करने हेतु उसको स्वीकार करते समय गुरु शिष्य के लिए उसी प्रकार की सुरक्षा की व्यवस्था करता है, जिस प्रकार की सुरक्षा माता अपने गर्भस्य शिशु को स्व उदर में प्रदान करती हैं-

आचार्यमुनयमानो ब्रह्मचारिणं कृणुते गर्भमन्त्रः। नं राजीस्तिस्रं बिभर्ति तं जातं द्रष्टुमभिसंयान्ति देवाः।।

– अथर्ववेद ११/३/५/३

गुरु शिष्य संबंध का यह उत्कृष्टतम दृष्टांत कहा जा सकता है। बालक अपने जन्मदाता माता-पिता का परित्याग करके गुरुकुल का आश्रम ग्रहण किया करता था, जहां आचार्य उसका शिक्षक ही नहीं पिता का स्थान

डा. मंजु नारंग, डी.लिट.

वेदकालीन शिक्षा पद्धति गुरुकुलीय प्रणाली पर आधारित थी। गुरुकुल का शाब्दिक अर्थ है- गुरु का कुल। इसमें कुल शब्द का तात्पर्य है एक लघुकाय पारिवारिक इकाई से निकलकर विशालकाय परिवार का अंग बन जाना। इस प्रकार की शिक्षा पद्धति में बालक का एक परिवार के स्थान पर सामाजिक परिवार में पालन पोषण किया जाता था। इस प्रकार की व्यवस्था के तीन सोपान थे- 1. माता-पिता का कुल, 2. गुरुकुल तथा 3. सामाजिक कुल। गुरुकुल में निवास करते हुए गुरु तथा शिष्य के मध्य निकटतम संबंध स्थापित हो जाया करता था। गुरुकुल में निवास काल में शिक्षार्थी को पुन: तीन प्रक्रियाओं से निकलना पड़ता था- आश्रमवास, उपनयन तथा ब्रह्मचर्य व्रत धारण करना। गुरुकुल में प्रवेश करने के साथ ही शिक्षार्थी को आलस्य का परित्याग करके श्रमपूर्ण जीवन को मूलरूप से स्वीकार करना होता था।

भी ग्रहण कर लिया करता था। उपनयन संस्कार किया हुआ बालक द्विज कहलाता था। द्विज से तात्पर्य है-द्वितीय बार जन्म ग्रहण करना। प्रथम बार तो शिशु माता-पिता से जन्म ग्रहण करता था, इसको उसका कायिक जन्म कहा जाता था। द्वितीय बार वह गुरुकुल में जाकर गुरु को माता-पिता मानकर जन्म ग्रहण किया करता था।

यह उसका मानसिक जन्म होता था। गुरुकुल में गुरु शिष्य को माता के द्वारा गर्भ में धारण करने के समान मन से धारण किया करता था। गुरुकुल में प्रवेश करते समय बालक का गुरु के द्वारा उपनयन संस्कार किया जाता था। उपनयन का शाब्दिक अर्थ है- समीप ले जाना। पिता अपने बालक को गुरु के समीप ले जाया करता था। इस अवसर पर आचार्य अपने शिष्य को व्रतपूर्वक आश्वस्त किया करता था कि तुम्हारे हृदय को मैं अपने हृदय में तथा तुम्हारे चित्र को स्वचित्र में धारण करता हूं-

मम व्रते ते हृदय दधामि मम चित्तं मनुचित्तं तेऽस्तु।

पास्कर गृह्य सूत्र २/२/१६

वैदिक शिक्षा पद्धति की तृतीय प्रक्रिया ब्रह्मचारी के द्वारा ब्रह्मचर्य व्रत को धारण करना था। ब्रह्मचर्य के यौगिक तथा रूढ़ि दो अर्थ होते हैं। इनमें यौगिक अर्थ व्यापक तथा रूढ़ि अर्थ व्याप्य होता है। ब्रह्मचारी शब्द की व्युत्पत्ति है- ब्रह्माणि चरति इति ब्रह्मचारी अर्थात् ब्रह्म में विचरण करने वाला ब्रह्मचारी होता है। गुरुकुलीय शिक्षा पद्धति में गुरुकुल में प्रवेश करने वाला बालक केवल मात्र शिक्षार्थी ही नहीं ब्रह्मचारी भी कहलाता था। शरीर को नैतिक शक्ति का क्षय नहीं होने देना तथा सदाचार पूर्ण संयमित जीवन यापन करना ब्रह्मचर्य कहलाता है। शिक्षा प्रदान करने वाला 'आचार्य' होता था। आचार्य का शाब्दिक अर्थ है 'आचार ग्राह्यतीति आचार्य:' अर्थात् आचरण को ग्रहण करवाने वाला आचार्य होता है।

अथर्ववेद में ब्रह्मचारी तथा आचार्य के कर्तव्यों को व्याख्यापित किया गया है कि वेद विद्या, प्राण विद्या, लोक विद्या तथा ईश्वर के स्वरूप को प्रकाशित करके मोक्ष मार्ग में दृढ़ रहकर, ऐश्वर्य को प्राप्त करना तथा पाखण्डों को नष्ट करना ब्रह्मचारी का कार्य होता है। ब्रह्मचारी तथा आचार्य श्रवण, मनन तथा निदिध्यासन से विद्या प्राप्त करके संसार के पृथ्वी इत्यादि समस्त पदार्थों के तत्वों का ज्ञान प्राप्त करके उनको उपयोगी बनाते हैं-

ब्रह्मचारी जनयन् ब्रह्मणो लोकं प्रजापतिं परमेष्ठिनं विराजम्। गर्भो भूत्वामृतस्य योना विन्द्रोह भूत्वा सुरास्ततहे।।
आचार्यस्तपक्ष नभसो उभे उर्वी गंभीरे पृथिवी दिवं च। ते रक्षाति तपसा ब्रह्मचारी तस्मिन् देवाः संमनसोभवन्ति।।

- अथवेवेद ११/३/५/७-८

उच्च सिद्धांतों पर आधारित वेद कालीन शिक्षा पद्धति हर्ष का विषय है। वर्तमान समय में भी जबकि आंग्लभाषा पर आधारित शिक्षा पद्धति का सम्पूर्ण भारत में जाल आच्छादित है, गुरुकुल शिक्षा पद्धति पर आधारित शिक्षा व्यवस्था अपने प्रबल प्रकाश से शिक्षा व्यवस्था को आलोकित करने में सक्षम है। केवल दृढ़ संकल्प के द्वारा पुरातन जीवन मूल्यों को अपनाकर इसको पुनरुज्जीवित करने की आवश्यकता है। पूर्ण आशा एवं विश्वास है कि भारतीय जनमानस पुनः वेदकालीन शिक्षा पद्धति को नवजीवन प्रदान करेगा।

OO

छत्रपति शिवाजी महाराज

भारत के वीर सपूतों में से एक श्रीमंत छत्रपति शिवाजी महाराज के बारे में सभी लोग जानते हैं। बहुत से लोग इन्हें हिन्दू हृदय सम्राट कहते हैं तो कुछ लोग इन्हें मराठा गौरव कहते हैं, जबकि वे भारतीय गणराज्य के महानायक थे। छत्रपति शिवाजी महाराज का जन्म 19 फरवरी 1630 में मराठा परिवार में हुआ। कुछ लोग 1627 में उनका जन्म बताते हैं। उनका पूरा नाम शिवाजी भोंसले था। शिवाजी, पिता शाहजी और माता जीजाबाई के पुत्र थे। उ‍नका जन्म स्थान पुणे के पास स्थित शिवनेरी का दुर्ग है। राष्ट्र को विदेशी और आतताई राज्य-सत्ता से स्वाधीन करा सारे भारत में एक सार्वभौम स्वतंत्र शासन स्थापित करने का एक प्रयत्न स्वतंत्रता के अनन्य पुजारी वीर प्रवर शिवाजी महाराज ने भी किया था। इसी प्रकार उन्हें एक अग्रगण्य वीर एवं अमर स्वतंत्रता-सेनानी स्वीकार किया जाता है। महाराणा प्रताप की तरह वीर शिवाजी राष्ट्रीयता के जीवंत प्रतीक एवं परिचायक थे। आओ जानते हैं श्रीमंत छत्रपति वीर शिवाजी के बारे में। शिवाजी पर मुस्लिम विरोधी होने का दोषारोपण किया जाता रहा है, पर यह सत्य इसलिए नहीं कि उनकी सेना में तो अनेक मुस्लिम नायक एवं सेनानी थे ही, अनेक मुस्लिम सरदार और सूबेदारों जैसे लोग भी थे। वास्तव में शिवाजी का सारा संघर्ष उस कट्टरता और उद्दंडता के विरुद्ध था, जिसे औरंगजेब जैसे शासकों और उसकी छत्रछाया में पलने वाले लोगों ने अपना रखा था। 1674 की ग्रीष्म ऋतु में शिवाजी ने धूमधाम से सिंहासन पर बैठकर स्वतंत्र प्रभुसत्ता की नींव रखी। दबी-कुचली हिन्दू जनता को उन्होंने भयमुक्त किया।

दयानन्द-गुण-गौरवम्

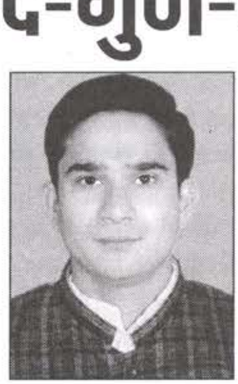

ओमकार शास्त्री
संस्कृत प्रवक्ता, आर्ष गुरुकुल, नोएडा

महर्षि दयानन्दः गुजरात-प्रान्तान्तर्गत-टंकारानगरे १८२४ ईसवीये जनिं लेभे। अस्य पितृवर्यः कर्षणजीतिवारी मातृवर्या अमृतवाई चास्ताम्। शास्त्र विधिमनुसृत्य जनकोऽस्य दशमेऽहनि मूलशंकर (मूलजी) इति नामधेयम् अकरोत्। अष्टमे संवत्सरे एनमुपानयत्। प्राप्ते तु त्रयोदशे वर्षे जनक एनं शिवरात्रिव्रतम् आदिदेश। शिवरात्रिव्रतकाले स निशीथे शिवोत्तमाङ्गम् आसाद्य नैवेद्यम् अश्नन्तं मूषकमेकम् अद्राक्षीत्। तदा चिन्तापिहितवृत्तिर्मनसोद्वेलितः पितरं शिवस्वरूपम् अप्राक्षीत्-किमयं मूर्तः शिवः सत्यः? उताहो शिवोऽन्य एव? जनकोऽस्य तज्जिज्ञासा समाधानेऽक्षमोऽभूत्। तदा स सत्यं शिवम् अन्वेष्टुं प्रतिज्ञातवान्। गृहे स्वभगिन्याः पितृव्यस्य च निधनम् आलोक्य कथं मोक्षावाप्तिर्जन्ममृत्युबन्धननिवृत्तिश्च स्यादिति वैराग्यम् उद्भूत्। स गृहं पितरौ च परित्यज्य वनमगात्। तत्र साधुसंगत्याऽपि न तृप्तिं लेभे। पूर्णानन्दयतेः संन्यासं गृहीत्वा 'दयानन्द सरस्वती' इत्याख्यां जगाम।

ततो हिमालयं प्राप्त तपश्चक्रे। पश्चाच्च विरजानन्दयतीश्वाराणां ख्यातिं संश्रुत्य तदन्तिकम् अवाप। तस्माद् ज्ञानभास्कराद् व्याकरणादिकम् अध्यैष्ट। वेदशास्त्रादिशिक्षाम् अवाप्य गुरुदक्षिणारूपेण तस्मै लवङ्गानि प्रायच्छत्। गुरुश्च तं समादिशत्- 'वेदविद्या विद्योतम्, शास्त्राणि समुल्लासय, भुवने वैदिकधर्मज्योतिः प्रज्वालय, सत्यशास्त्राणि समुद्धर, मतमतान्तरप्रसारिताम् अविद्यानिशीथिनीम् अपसारय, पाषण्डततिं समुन्मूलय' इति।

काश्यां १० नवम्बर, १८६९ ईसवीये 'मूर्तिपूजा वेदविरुद्धा' इति विषयमाश्रित्य तस्य काशीस्थैर्विद्वद्भिः शास्त्रार्थो बभूव। तत्र च विजयश्रीरेनम् अवृणोत्। तस्य विजयोद्घोषस्तदानीन्तैः समाचारपत्रैः पायोनीयर-हिन्दु ज्ञानप्रदायिनी- प्रभृतिभिः प्रसारित। स १३ अप्रैल, १८७५ ईसवीये मुम्बापुर्यां सर्वप्रथमम् आर्यसमाजम् अस्थापयत्।

भारतवर्षस्य विभिन्नप्रदेशेषु प्रचारादिविधिना वैदिकधर्मसिद्धान्तान् प्रासारयत्। जोधपुरनगरे २९ सितम्बर, १८८३ ईसवीये नन्हीनाम्न्या वेश्याया वशगो भूत्वाऽस्थ पाचको जगन्नाथो दुग्धे विषं सम्मिश्र्यैनं प्रादात्। ततश्च स ३० अक्टूबर, १८८३ ईसवीये मङ्गलवासरे दीपावलि पर्वणि ज्ञानराशिर्यतीश्वरोऽयं भौतिकं शरीरं विहाय यशः शेषताम् अयात्। भारतवर्ष समाजसुधारकेषु महर्षिर्दयान्दो मूर्धन्यः। तस्य समा-सेवारकार्येषु सर्वोत्कृष्टत्वं पाश्चात्यैरपि मनीषिभिः साह्यादम् उद्घोष्यते। स महर्षिरेव जन्ममूलां जातिप्रथां निरस्य गुणकर्मानुसारं वर्णव्यवस्थां वेदाभिमताम् अघोषयत्। समाजे प्रचलितं बद्धमूलम् अनर्थमूलं च सर्वविधमपि पाषण्डं प्रपञ्चम्, धार्मिकमन्धानुकरणम्, अंधविश्वासं भूतप्रेतादिप्रवादं च निराकरोत्। मूर्तिपूजैषा सर्वविधायाः पाषण्डपरम्पराया आधारभूतेति निर्णाय, अस्या वेदविरुद्धत्वं चावगत्य, युक्ति-प्रमाण-पुरःसरं भूर्तिपूजाम् अखण्डयत्। मृतानां पितणां श्राद्ध-तर्पणादिविधिरपि वेदविरुद्ध एवेति स प्रत्यपादयत्। मातृशक्तेरुन्नतिमन्तरेण न देशोन्नतिः सम्भवतीति विचारं-विचारं स्त्रीशिक्षायां बलं न्यधात्। स एव स्त्रीशिक्षायाः सर्वप्रथमप्रचारकत्वेना-भिनन्द्यते। स आर्षपद्धतिमनुसृत्य गुरुकुल संस्थापनासमकालमेव कन्यागुरुकुलपद्धतिमपि प्रावर्तयत्। अस्पृश्योद्धारविषये स महात्मनो गान्धेरग्रदूतः। स बालविवाहम् अहितकरमिति निश्चित्य न्यषेधयत्। विधवाविवाहम्, विधवाश्रमम्, अनाथालयादिकं च प्रावर्तयत्।

राष्ट्रभाषाया हिन्दीभाषाया अपि प्रवर्तने तस्यापूर्व योगदानम्। गुर्जरदेशीयोऽपि सन् संस्कृतभाषानिष्णातोऽपि सन्, लोकहितभावनया आर्यभाषा हिन्दीभाषामेव लेखनस्य प्रचारस्य च माध्यमं चक्रे। हिन्दीभाषाप्रचारे आर्यसमाजस्य यथा योगदानम्, न तथाऽन्यस्य कस्यचिदापि समाजस्य। स वेदाध्ययनम् आर्याणां परमकर्तव्यम् अमन्यत। अतएव स वेदाध्ययनेऽतीव बलं न्यधात्। वेदा एवार्यजातेः प्रमाणत्वेन संमान्या ग्रंथाः सन्ति, इत्येवं सोऽघोषयत्। भारते शिक्षाप्रसारे तन्मतमनुरुध्य प्रवर्तितानां डीएवी कालेज-प्रभृतीनां महत्वपूर्णं योगदानम्। राष्ट्रियता-जागरणेऽपि तस्य विशिष्टं योगदानम्। १८५७ ईसवीये संजातायां राष्ट्रियक्रान्तौ तस्य महर्षेः परोक्षं योगदानमभूदिति ऐतिह्यविद्भिर्निश्चप्रचं प्रतिपाद्यते। सत्यार्थप्रकाशे स्फुटं तेन प्रतिपाद्यते यद् निकृष्टमपि स्वराज्यं श्रेयोवहादपि परकीयाद् राज्यात् श्रेयस्करम्। कृतयः महर्षिर्दयानन्दः प्रथिततमाः कृतयः सन्ति- ऋग्वेदभाष्यम्, यजुर्वेदभाष्यम्, ऋग्वेदादि भाष्यभूमिका, सत्यार्थ प्रकाशः, संस्कारविधिः, गोकरुणानिधिः, व्यवहारभानुः, आर्याभिविनय- प्रभुतयः। तत्र नैरुक्तप्रक्रियाम् आश्रित्य कृतं वेदभाष्यं वेदानां गौरवं सर्वज्ञाननिधानत्वं च प्रतिष्ठापयति। सत्यार्थप्रकाशो विश्ववाङ्मयस्य प्रकाशस्तम्भः। सोऽयं स्वसिद्धान्त समर्थनेन परपक्षनिरसनेन चाभुवनं प्रथतेतमाम्। ○○

भारतीया संस्कृतिः

डॉ. शिवप्रसाद शर्मा

जगन्नियन्तुः परिवर्तनशीले जगति यावत्यः संस्कृतय उपलभ्यन्ते तासु भारतीया संस्कृतिः प्राचीनतमा एकतमा श्रेष्ठा प्रेष्ठा च विद्यते। यूनानदेशीया, रोमदेशीया, मिश्रदेशीया च संस्कृतिः संसारे विलुप्ता जाता; किंतु भारतीय संस्कृतिः अद्यापि सहस्रसहस्रान् वर्षानतीत्य तथैव स्वस्था सबला जागर्ति तथा पूर्वकाले आसीत्। अस्य किं रहस्यमिति सर्वे अन्विषन्तिः किन्त्वत्र नास्ति किञ्चिद् गुप्तं रहस्यम्। सर्वमेव हस्तामलकवत् सुस्पष्टं विद्यते। अथ केयं भारतीया संस्कृतिः कीदृशञ्चास्य वैशिष्ट्यामित्यत्र विविच्यते।

संस्काराणां लोकव्यवहाराणां दिग्दर्शिका भवति संस्कृतिः। समाजस्य दर्पणमिवाभासयति संस्कृतिः लोकव्यवहारम्। भारतीया संस्कृतिः धर्मेणानुप्राणिता सम्पुष्टा संरक्षिता च विद्यते। अस्यां संस्कृतौ सर्वत्र धर्मस्यानुशासनं दृश्यते पदे-पदे। त्यागपूर्वकं भोगस्यादेश ईशावास्योपनिषदि, दृश्यते यथा-

ईशावास्यमिदं सर्वं यत्किञ्चिज्जगत्यां जगत्।
तेन त्यक्तेन भुञ्जीथा मा गृधः कस्यस्विद्धनम्।।

तथा च धर्मार्थ-काममोक्षेषु धर्मस्यैव प्राधान्यम्। यतः अन्येषां त्रयाणां समुचितरूपेण साधकः धर्म एवास्ति। भौतिकसुखेष्वनासक्तिमुत्पाद्य आध्यात्मिक सुखावाप्तये सम्प्रेरणा भारतीय संस्कृतेः प्रमुखवैशिष्ट्यम्। पाश्चात्य संस्कृतीनां विनाशस्य अयमेव हेतुः यत् ताः सर्वाः भौतिक सुखवादेनानु प्राणिता धर्मानुशासनविरहिता आसन्। धर्मादीनां लोकजीवने महत्वम्, जगत्स्रष्टुः आराधनं यावत् समाप्यते। पापकर्कैभ्यः विरक्तिपूर्वकं सकललोकमंगल भावनया धर्मानुष्ठानं तेषां संस्कृतौ नासीत्।

सर्वासां संस्कृतीनां गुणग्रहणं अवगुणवारणञ्च भारतीय संस्कृतेः अपरं वैशिष्टयम्। काले-काले अत्र यवनशकबरहूणादय आगताः। तैः सह तत्तत्या संस्कृतिरपि भारते आगताः किन्त्विदानीं ताः संस्कृतिः पृथग्रूपेण नावलोक्यन्ते।

भारतीया संस्कृतिः समष्टिपरा विद्यते। अत्र कुलस्यार्थे एकस्य, ग्रामस्यार्थे कुलस्य तथा राष्ट्रस्य समाजस्य वाऽर्थे ग्रामस्य हितरूपत्यागो वरं प्रोक्तः। अन्यत्र ईदृशी भावना दुर्लभा। धर्मेणानुशासिताः चत्वारः आश्रमाः मानवजीवने विद्याविनयशील सदाचारत्यागतपादया इत्यादीन् गुणान् प्रकटयन्ति। येन समाजे सुव्यवस्था दृढ़ता च आयाति। पुरुषार्थचतुष्टयस्य कल्पनाऽपि समष्टितया एव कल्प्यते। समाजे मानव कर्तव्यनिरूपणप्रसङ्गे अत्रोल्लिख्यते। निर्देशो यथा-

अनुव्रतः पितुः पुत्रो माता भवतु संमनाः।
जाया पत्ये मधुमती वाचं वदतु शान्तिवान्।।
मा भ्राता भ्रातरं द्विक्षन्मा स्वसारमुत स्वसा।
सम्यग्यञ्च सव्रता भूत्वा वाचं वदत भद्रया।।

समाजे एकतास्थापनार्थ उपनिषत्सु धर्मग्रंथेषु च सम्यग्रूपेण विशदविवेचनम् प्राप्यते। भारतीयानां कृते समस्तविश्वम् कुटुम्बसदृशं विद्यते। उक्तं च-

अयं परः निजो वेति गणना लघुचेतसाम्।
उदारचरितानां तु वसुधैव कुटुम्बकम्।।
सर्वे भवन्तु सुखिनः सर्वे सन्तु निरामयाः।
सर्वे भद्राणि पश्यन्तु मा कश्चिद्दुः खभाग्भवेत्।।

अनया भावनया प्रेरिताः जनाः उदारमनाः न केवलं मानवमात्रस्य कल्याणमिच्छन्ति; अपि तु पशुपक्षि तरुगल्मादीनामापि कल्याणमिच्छन्ति। रन्तिदेवशिविदधीचि प्रभृतीनां कथाः मानवेतर-प्राणिनां कष्टवारणाय कल्पिताः सन्ति। अभिज्ञानशाकुंतले वृक्षचिकित्सायाः उदाहरणं प्राप्यते। एवमस्यां संस्कृतौ परेषां कृते जलभोजनादिप्रदानेन सुखाभिवृद्धिः विद्यते।

अस्माकं भारतदेशेः अतिप्राचीनकालादेव बहुविधसमुदायानां जातीनाञ्च संग्रहोऽस्ति। हिमालयात् समुद्रपर्यन्तं विस्तीर्णा वसुंधरा भारतीय संस्कृतेः प्रसारक्षेत्रं निर्धारयति। अस्यां भारतभुवि हिन्दू-मुस्लिम-सिख-खिस्त-प्रभृयतो विविधमतावलम्बिनो वसन्ति। काशी-मथुरा-प्रयास-हरिद्वार-अमृतसर-प्रभृति-स्थानेषु एतेषां संस्कृतीनामेकत्र परस्परसमभावेन स्थितिः अवलोकनीया।

इदं महद्दुर्भाग्यकरं यदिदानी हिंदू-मुस्लिमयोः हिन्दूसिखयोश्च अन्येषामपि भारते यदाकदा संघर्षः श्रूयते, किन्तु संघर्षस्य कारणं न सांस्कृतिं अपि तु स्वर्थ प्रेरितमेव भवति। अतः सर्वेषां भारतनिवासिनां परमकर्त्तव्यं यद् अस्याः संस्कृतेः प्राणयणेनापि रक्षा कर्तव्या।

“विद्या ददाति विनयं विनयाद् याति पात्रताम्। पात्रत्वाद् धनमक्षय्यं ततो धर्मः ततः सुखम्।।
पुस्तकेषु च नाऽधीतं नाधीतं गुरुसन्निधौ। न शोभते सभामध्ये जारगर्भा इव स्त्रियः।।”

रक्त साक्षी पंडित लेखराम आर्य

बलिदान दिवस
शत्-शत् नमन

पंडित लेखराम आर्य (1858-1897), आर्य समाज के प्रमुख कार्यकर्ता एवं प्रचारक थे। उन्होंने अपना सारा जीवन आर्य समाज के प्रचार प्रसार में लगा दिया। वे अहमदिया मुस्लिम समुदाय के नेता मिर्जा गुलाम अहमद से शास्त्रार्थ एवं उसके दुस्प्रचारों के खंडन के लिए विशेष रूप से प्रसिद्ध हैं। उनका संदेश था कि तहरीर (लेखन) और तकरीर (शास्त्रार्थ) का काम बंद नहीं होना चाहिए। पंडित लेखराम इतिहास की उन महान हस्तियों में शामिल हैं जिन्होंने धर्म की बलिवेदी पर प्राण न्योछावर कर दिए। जीवन के अंतिम क्षण तक आप वैदिक धर्म की रक्षा में लगे रहे। पंडित लेखराम ने अपने प्राणों की परवाह न करते हुए हिंदुओं को धर्म परिवर्तन से रोका व शुद्धि अभियान के प्रणेता बने। लेखराम का जन्म 8 चैत्र, संवत् 1915 (1858 ई.) को झेलम जिला के तहसील चकवाल के सैदपुर गांव में हुआ था। उनके पूर्वज महाराजा रणजीत सिंह की फौज में थे। उनके पिता का नाम तारा सिंह एवं माता का नाम भाग भरी था। स्वामी दयानंद का जीवनचरित् लिखने के उद्देश्य से उनके जीवन संबंधी घटनाएं इकट्ठी करने के सिलसिले में उन्हें भारत के बहुसंख्यक स्थानों का दौरा करना पड़ा। इस कारण उनका नाम 'आर्य मुसाफिर' पड़ गया। पं लेखराम हिंदुओं को मुसलमान होने से बचाते थे। एक कट्टर मुसलमान ने 3 मार्च सन् 1897 को ईद के दिन, 'शुद्धि' कराने के बहाने, धोखे से लाहौर में उनकी हत्या कर डाली। उस समय वह स्वामी दयानन्द की जीवन चरित्र लिख रहे थे।

पुण्यतिथि
शत्-शत् नमन

पं. गुरुदत्त विद्यार्थी

पंडित गुरुदत्त विद्यार्थी (26 अप्रैल 1864-1890), महर्षि दयानन्द सरस्वती के अनन्य शिष्य एवं कालान्तर में आर्यसमाज के प्रमुख नेता थे। उनकी गिनती आर्य समाज के पांच प्रमुख नेताओं में होती है। 26 वर्ष की अल्पायु में ही उनका देहान्त हो गया किन्तु उतने ही समय में उन्होने अपनी विद्वता की छाप छोड़ी और अनेकानेक विद्वतापूर्ण ग्रन्थों की रचना की। अद्भुत प्रतिभा, अपूर्व विद्वत्ता एवं गम्भीर वक्तृत्व-कला के धनी पंडित गुरुदत्त विद्यार्थी का जन्म 26 अप्रैल 1864 को मुल्तान के प्रसिद्ध 'वीर सरदाना' कुल में हुआ था। आपके पिता लाला रामकृष्ण फारसी के विद्वान थे। आप पंजाब के शिक्षा विभाग में अध्यापक थे। विशिष्ट मेधा एवं सीखने की उत्कृट लगन के कारण वे अपने साथियों में बिल्कुल अनूठे थे। किशोरावस्था में ही उनका हिन्दी, उर्दू, अरबी एवं फारसी पर अच्छा अधिकार हो गया था तथा उसी समय उन्होंने 'द बाइबिल इन इण्डिया' तथा 'ग्रीस इन इण्डिया' जैसे बड़े-बड़े ग्रन्थ पढ़ लिये। कॉलेज के द्वितीय वर्ष तक उन्होंने चार्ल्स ब्रेडले, जेरेमी बेन्थम, जॉन स्टुअर्ट मिल जैसे पाश्चात्य विचारकों के शतश: ग्रन्थ पढ़ लिये। वे मार्च, 1886 में पंजाब विश्वविद्यालय की एम.ए. (विज्ञान, नेचुरल साइंस) में सर्वप्रथम रहे। तत्कालीन महान समाज सुधारक महर्षि दयानन्द के कार्यों से प्रभावित होकर उन्होंने 20 जून 1880 को आर्यसमाज की सदस्यता ग्रहण की। महात्मा हंसराज व लाला लाजपत राय उनके सहाध्यायी तथा मित्र थे। वह 'द रिजेनरेटर ऑफ आर्यावर्त' के वे सम्पादक रहे। 1884 में उन्होंने 'आर्यसमाज साइंस इन्स्टीट्यूशन' की स्थापना की। अपने स्वतन्त्र चिन्तन के कारण इनके अन्तर्मन में नास्तिकता का भाव जागृत हो गया। दीपावली (1883) के दिन, महाप्रयाण का आलिंगन करते हुए महर्षि दयानन्द के अन्तिम दर्शन ने गुरुदत्त की विचारधरा को पूर्णत: बदल दिया। अब वे पूर्ण आस्तिक एवं भारतीय संस्कृति एवं परम्परा के प्रबल समर्थक एवं उन्नायक बन गए। वे डीएवी के मंत्रदाता एवं सूत्रधार थे। पूरे भारत में साइंस के सीनियर प्रोफेसर नियुक्त होने वाले वह प्रथम भारतीय थे। वे गम्भीर वक्ता थे, जिन्हें सुनने के लिए भीड़ उमड़ पड़ती थी। उन्होंने कई गम्भीर ग्रन्थ लिखे, उपनिषदों का अनुवाद किया। उनके जीवन में उच्च आचरण, आध्यात्मिकता, विद्वत्ता व ईश्वरभक्ति का अद्भुत समन्वय था। उन्हें वेद और संस्कृत से इतना प्यार था कि वे प्राय: कहते थे कि- 'कितना अच्छा हो यदि मैं समस्त विदेशी शिक्षा को पूर्णतया भूल जाऊं तथा केवल विशुद्ध संस्कृतज्ञ बन सकूं।' 'वैदिक मैगजीन' के नाम से निकाले उनके रिसर्च जर्नल की ख्याति देश-विदेश में फैल गई। यदि वे दस वर्ष भी और जीवित रहते तो भारतीय संस्कृति का बौद्धिक साम्राज्य खड़ा कर देते। पर, विधि के विधान स्वरूप उन्होंने 19 मार्च 1890 को चिरयात्रा की तरफ प्रस्थान कर लिया। पंजाब विश्वविद्यालय, चंडीगढ़ ने 2000 ई. में उनके सम्मान में अपने रसायन विभाग के भवन का नाम 'पंडित गुरुदत्त विद्यार्थी हाल' रखा है। आर्य समाज को उन पर नाज है!

अमर शहीद भगत सिंह

बलिदान दिवस
शत्-शत् नमन

भगत सिंह (जन्म : 27 सितम्बर 1907, मृत्यु : 23 मार्च 1931) भारत के एक प्रमुख स्वतंत्रता सेनानी थे। भगतसिंह संधु जाट सिक्ख थे उन्होंने देश की आज़ादी के लिए जिस साहस के साथ शक्तिशाली ब्रिटिश सरकार का मुक़ाबला किया, वह भुलाया नहीं जा सकता। इन्होंने केन्द्रीय संसद में बम फेंककर भी भागने से मना कर दिया। जिसके फलस्वरूप इन्हें 23 मार्च 1931 को इनके दो अन्य साथियों, राजगुरु तथा सुखदेव के साथ फांसी पर लटका दिया गया। सारे देश ने उनके बलिदान को बड़ी गम्भीरता से याद किया। पहले लाहौर में साण्डर्स की हत्या और उसके बाद दिल्ली की केन्द्रीय असेम्बली में चन्द्रशेखर आजाद व पार्टी के अन्य सदस्यों के साथ बम-विस्फोट करके ब्रिटिश साम्राज्य के विरुद्ध खुले विद्रोह को बुलंदी प्रदान की। भगत सिंह को समाजवादी,वामपंथी और मार्क्सवादी विचारधारा में रुचि थी। अमृतसर में 13 अप्रैल 1919 को हुए जलियांवाला बाग हत्याकांड ने भगत सिंह की सोच पर गहरा प्रभाव डाला था। लाहौर के नेशनल कॉलेज़ की पढ़ाई छोड़कर भगत सिंह ने भारत की आज़ादी के लिये नौजवान भारत सभा की स्थापना की थी। काकोरी कांड में राम प्रसाद 'बिस्मिल' सहित 4 क्रांतिकारियों को फांसी व 16 अन्य को कारावास की सजाओं से भगत सिंह इतने अधिक उद्विग्न हुए कि पंडित चन्द्रशेखर आजाद के साथ उनकी पार्टी हिन्दुस्तान रिपब्लिकन ऐसोसिएशन से जुड गये और उसे एक नया नाम दिया हिन्दुस्तान सोशलिस्ट रिपब्लिकन एसोसिएशन।

बलिदान दिवस
शत्-शत् नमन

अमर शहीद शिवराम हरि राजगुरु

शिवराम हरि राजगुरु (जन्म : 24 अगस्त 1908–मृत्यु : 23 मार्च 1931) भारतीय स्वतंत्रता संग्राम के एक प्रमुख क्रांतिकारी थे। इन्हें भगत सिंह और सुखदेव के साथ 23 मार्च 1931 को फांसी पर लटका दिया गया था। भारतीय स्वतंत्रता संग्राम के इतिहास में राजगुरु की शहादत एक महत्वपूर्ण घटना थी। शिवराम हरि राजगुरु का जन्म भाद्रपद के कृष्णपक्ष की त्रयोदशी सम्वत् 1965 में पुणे जिला के खेडा गांव में हुआ था। 6 वर्ष की आयु में पिता का निधन हो जाने से बहुत छोटी उम्र में ही ये वाराणसी विद्याध्ययन करने एवं संस्कृत सीखने आ गये थे। इन्होंने हिन्दू धर्म-ग्रंन्थों तथा वेदों का अध्ययन तो किया ही लघु सिद्धान्त कौमुदी जैसा क्लिष्ट ग्रन्थ बहुत कम आयु में कंठस्थ कर लिया था। इन्हें व्यायाम का बेहद शौक था और छत्रपति शिवाजी की छापामार युद्ध-शैली के बड़े प्रशंसक थे। वाराणसी में विद्याध्ययन करते हुए राजगुरु का सम्पर्क अनेक क्रांतिकारियों से हुआ। चन्द्रशेखर आजाद से इतने अधिक प्रभावित हुए कि उनकी पार्टी हिन्दुस्तान सोशलिस्ट रिपब्लिकन आर्मी से तत्काल जुड़ गये। आजाद की पार्टी के अन्दर इन्हें रघुनाथ के छद्म-नाम से जाना जाता था, राजगुरु के नाम से नहीं। पंडित चन्द्रशेखर आज़ाद, सरदार भगत सिंह और यतीन्द्रनाथ दास आदि क्रांतिकारी इनके अभिन्न मित्र थे।

अमर शहीद सुखदेव थापर

बलिदान दिवस
शत्-शत् नमन

सुखदेव थापर का जन्म पंजाब के शहर लायलपुर में श्रीयुत् रामलाल थापर व श्रीमती रल्ली देवी के घर विक्रमी सम्वत् 1964 के फाल्गुन मास में शुक्ल पक्ष सप्तमी तदनुसार 15 मई 1907 को अपरान्ह पौने ग्यारह बजे हुआ था। जन्म से तीन माह पूर्व ही पिता का स्वर्गवास हो जाने के कारण इनके ताऊ अचिन्तराम ने इनका पालन पोषण करने में इनकी माता को पूर्ण सहयोग किया। सुखदेव की तायी जी ने भी इन्हें अपने पुत्र की तरह पाला। लाला लाजपत राय की मौत का बदला लेने के लिये जब योजना बनी तो साण्डर्स का वध करने में इन्होंने भगत सिंह तथा राजगुरु का पूरा साथ दिया था। यही नहीं, सन् 1929 में जेल में कैदियों के साथ अमानवीय व्यवहार किये जाने के विरोध में राजनीतिक बंदियों द्वारा की गयी व्यापक हड़ताल में बढ़-चढ़कर भाग भी लिया था। गांधी-इर्विन समझौते के संदर्भ में इन्होंने एक खुला खत गांधी के नाम अंग्रेजी में लिखा था जिसमें इन्होंने महात्मा जी से कुछ गंभीर प्रश्न किये थे। उनका उत्तर यह मिला कि निर्धारित तिथि और समय से पूर्व जेल मैनुअल के नियमों को दरकिनार रखते हुए 23 मार्च 1931 को सायंकाल 7 बजे सुखदेव, राजगुरु और भगत सिंह तीनों को लाहौर सेंट्रल जेल में फांसी पर लटका कर मार डाला गया।

मर्यादा पुरुषोत्तम श्रीराम

मर्यादा पुरुषोत्तम भगवान श्रीराम धर्म के साक्षात् स्वरूप हैं। उनका चरित्र विश्वमानव के लिए आदर्श चरित्र है। भगवान श्रीराम के बाल्यकाल से लेकर प्रयाणकाल तक की सम्पूर्ण लीलाएं धर्म व मर्यादा से ओत-प्रोत हैं। भगवान श्रीराम अनन्त कोटि ब्रह्माण्डनायक परब्रह्म होते हुए भी पारिवारिक जीवन में मर्यादा का इतना उत्कृष्ट आदर्श प्रस्तुत करते हैं कि समस्त विश्व उन्हें 'मर्यादा पुरुषोत्तम' कहकर संबोधित करता है।

भाइयों के प्रति प्रेम से उनका हृदय इतना द्रवित रहता था कि वे भाइयों के साथ खेलते समय स्वयं हार जाते लेकिन अपने भाइयों को हारा हुआ नहीं देख सकते थे। जब गुरुजनों एवं माता-पिता के बीच राज्याभिषेक की चर्चा चली तो सबका झुकाव श्रीरामजी की ओर था। तब रामजी सोचने लगे कि 'सब भाई एक साथ जन्मे, साथ-साथ सबका पोषण हुआ, साथ-साथ खाये-पीये, खेले-पढ़े फिर यह क्या कारण है कि एक ही भाई को राजगद्दी मिले?' वे हमेशा पहले भाइयों की सुख-सुविधा की बात सोचते, बाद में अपनी।

रामजी ने पिता के सत्य, धर्म की रक्षा के लिए अपने राज्याभिषेक के दिन ही समस्त राजसिक सुखों को ठोकर मारकर 14 वर्ष का कष्टमय वनवास स्वीकार कर लिया। पिता की मृत्यु, भाइयों की हृदय-व्यथा, पत्नी का महान कष्ट, स्वजनों का आर्तनाद और प्रजावर्ग का शोक भी उन्हें कर्तव्य-पथ से विचलित नहीं कर पाया। अपने धर्म में दृढ़ रहते हुए वे कहीं भी गुरुजनों से तर्क-वितर्क नहीं करते, सदैव अपनी धर्म-मर्यादा में स्थित रहते थे। माता कैकेयी द्वारा पक्षपात भरा व्यवहार किये जाने पर भी भगवान श्रीराम उन्हें 'जननी' कहकर पुकारते और उन्हें प्रणाम करते थे। वनवास से लौटने पर वे सबसे पहले माता कैकेयी के चरणस्पर्श करने गये।

श्रीरामजी की अपने माता-पिता व गुरुजनों के प्रति ऐसी दृढ़ भक्ति को अगर आज का मानव चरितार्थ करे तो घर-घर में रामजी का प्राकट्य हो जाय। यदि वह प्रभु श्रीराम के उपरोक्त प्रकार के सुंदर जीवन-प्रसंगों से शिक्षा लेकर, रामजी के सद्गुणों को अपना आदर्श बनाकर अपने भाइयों, माता-पिता, सगे-संबंधियों तथा अन्य लोगों से व्यवहार करे तो भाई-भाई, पिता-पुत्र आदि के बीच कलह-मनमुटाव का लेशमात्र नहीं रहेगा और परस्पर प्रेम व स्नेह का व्यवहार बढ़ता जायेगा। हम सभी का यह कर्तव्य है कि भगवान श्रीराम के आदर्शों का अनुसरण करते हुए अपने जीवन को परम उन्नति-भगवत्सुख की प्राप्ति के रास्ते ले जायें।

मर्यादा पुरुषोत्तम प्रभु श्री राम भगवान विष्णु के सातवें अवतार हैं, जिन्होंने त्रेता युग में रावण का संहार करने के लिए धरती पर अवतार लिया। कौशल्या नंदन प्रभु श्री राम अपने भाई लक्ष्मण, भरत और शत्रुघ्न से एक समान प्रेम करते थे। उन्होंने माता कैकेयी की 14 वर्ष वनवास की इच्छा को सहर्ष स्वीकार करते हुए पिता के दिए वचन को निभाया। उन्होंने 'रघुकुल रीत सदा चली आई, प्राण जाय पर वचन न जाई' का पालन किया। भगवान श्री राम को मर्यादा पुरुषोत्तम इसलिए कहा जाता है क्योंकि इन्होंने कभी भी कहीं भी जीवन में मर्यादा का उल्लंघन नहीं किया। माता-पिता और गुरु की आज्ञा का पालन करते हुए वह 'क्यों' शब्द कभी मुख पर नहीं लाये। वह एक आदर्श पुत्र, शिष्य, भाई, पति, पिता और राजा बने, जिनके राज्य में प्रजा सुख-समृद्धि से परिपूर्ण थी।

नवमी तिथि का महत्व : भगवान का जन्म नवमी तिथि को हुआ जो अपने आप में ही पूर्ण है। अंकशास्त्र के तहत 9 का अंक सबसे बड़ा और पूर्ण है। यदि 9 के अंक को किसी भी अन्य एक अंक से गुणा करेंगे तो उसके गुणांक का जोड़ भी 9 ही होगा।

केवट की ओर से गंगा पार करवाने पर भगवान ने उसे भवसागर से ही पार लगा दिया। राम सद्गुणों के भंडार हैं इसीलिए लोग उनके जीवन को अपना आदर्श मानते हैं। सर्वगुण सम्पन्न भगवान श्री राम असामान्य होते हुए भी आम ही बने रहे। युवराज बनने पर उनके चेहरे पर खुशी नहीं थी और वन जाते हुए भी उनके चेहरे पर कोई उदासी नहीं थी। वह चाहते तो एक बाण से ही समस्त सागर सुखा सकते थे लेकिन उन्होंने लोक-कल्याण को सर्वश्रेष्ठ मानते हुए विनय भाव से समुद्र से मार्ग देने की विनती की। शबरी के भक्ति भाव से प्रसन्न होकर उसे 'नवधा भक्ति' प्रदान की। वर्तमान युग में भगवान के आदर्शों को जीवन में अपना कर मनुष्य प्रत्येक क्षेत्र में सफलता पा सकता है। उनके आदर्श विश्वभर के लिए प्रेरणास्रोत हैं। OO

आर्य समाज स्थापना दिवस

मनमोहन कुमार आर्य

ओ३म् महर्षि दयानन्द सरस्वती (1825-1883) उन्नीसवीं शताब्दी के समाज व धर्म-मत सुधारकों में अग्रणीय महापुरुष हैं। उन्होंने 10 अप्रैल सन् 1875 ई. (चैत्र शुक्ला 5 शनिवार सम्वत् 1932 विक्रमी) को मुम्बई में आर्यसमाज की स्थापना की थी। इससे पूर्व उन्होंने 6 या 7 सितम्बर, 1872 को वर्तमान बिहार प्रदेश के 'आरा' स्थान पर आगमन पर भी वहां आर्यसमाज स्थापित किया था। उपलब्ध इतिहास व जानकारी के अनुसार यह प्रथम आर्यसमाज था।

महर्षि दयानन्द सरस्वती की जीवनी के लेखक पं. देवेन्द्रनाथ मुखोपाध्याय रचित जीवन चरित में इस विषय में उल्लेख है कि 'नगर के सभी सम्भ्रान्त पुरुष महाराज के दर्शनार्थ आते थे और संध्या समय उनके पास अच्छी भीड़ लग जाती थी। स्वामीजी ने आरा में एक सभा की भी स्थापना की थी जिसका उद्देश्य आर्यधर्म और रीति-नीति का संस्कार करना था, परन्तु उसके एक-दो ही अधिवेशन हुए।

स्वामी जी के आरा से चले जाने के पश्चात् थोड़े ही दिन में उसकी समाप्ती (गतिविधियां बन्द) हो गई।' जिन दिनों आर्यसमाज आरा की स्थापना हुई, तब न तो सत्यार्थप्रकाश प्रकाशित हुआ था और न हि संस्कारविधि, आर्याभिविनय वा अन्य किसी प्रमुख ग्रन्थ की रचना ही हुई थी। आरा में स्वामीजी का प्रवास मात्र 1 या 2 दिनों का होने के कारण आर्यसमाज के नियम आदि भी नहीं बनाये जा सके थे। यहां से स्वामीजी पटना आ गये थे और यहां 25 दिनों का प्रवास किया था। आरा में स्वामीजी ने पं. रुद्रदत्त और पं. चन्द्रदत्त पौराणिक मत के पंडितों से मूर्तिपूजा पर शास्त्रार्थ किया था।

प्रसंग उठने पर आपने बताया था कि सभी 'पुराण' ग्रन्थ वंचक लोगों के रचे हुए हैं। आरा में स्वामी जी के दो व्याख्यान हुए जिनमें से एक यहां के गवर्नमेंट स्कूल के प्रांगण में हुआ था। व्याख्यान वैदिक धर्म विषय पर था जिसमें बोलते हुए स्वामी जी ने कहा था कि प्रचलित हिन्दू धर्म और रीति-रिवाज वेदानुमोदित नहीं हैं, प्रतिमा-पूजा वेद प्रतिपादित नहीं है, विधवा विवाह वेद-सम्मत और बाल विवाह वेद विरुद्ध है। व्याख्यान में स्वामी जी ने कहा था कि गुरु दीक्षा करने की रीति आधुनिक है तथा मंत्र देने का अर्थ कान में फूंक मारने का नहीं है, जैसा कि दीक्षा देने वाले गुरू करते थे।

स्वामी दयानन्द जी ने 31 दिसम्बर 1874 से 10 जनवरी 1875 तक राजकोट में प्रवास कर वैदिक धर्म का प्रचार किया। यहां जिस कैम्प की धर्मशाला में स्वामी ठहरे, वहां उन्होंने आठ व्याख्यान दिये जिनके विषय थे ईश्वर, धर्मोदय, वेदों का अनादित्व और अपौरुषेयत्व, पुनर्जन्म, विद्या-अविद्या, मुक्ति और बन्ध, आर्यों का इतिहास और कर्तव्य। यहां स्वामीजी ने पं. महीधर और जीवनराम शास्त्री से मूर्तिपूजा और वेदांत-विषय पर शास्त्रार्थ भी किया।

स्वामीजी का यहां राजाओं के पुत्रों की शिक्षा के कालेज, राजकुमार कालेज में एक व्याख्यान हुआ। उपदेश का विषय था 'अंहिसा परमो धर्म।' यहां स्कूल की ओर से स्वामीजी को प्रो. मैक्समूलर संपादित ऋग्वेद भेंट किया गया था। राजकोट में आर्यसमाज की स्थापना के विषय में पं. देवेन्द्रनाथ मुखोपाध्याय रचित महर्षि दयानन्द के जीवन चरित में निम्न विवरण प्राप्त होता है-'स्वामीजी ने यह प्रस्ताव किया कि राजकोट में आर्यसमाज स्थापित किया जाय और प्रार्थना-समाज को ही आर्यसमाज में परिणत कर दिया जाय।

प्रार्थना-समाज के सभी लोग इस प्रस्ताव से सहमत हो गये। वेद के निर्भ्रान्त होने पर किसी ने आपत्ति नहीं की। स्वामीजी के दीप्तिमय शरीर और तेजस्विनी वाणी का लोगों पर चुम्बक जैसा प्रभाव पड़ता था। वह सबको नतमस्तक कर देता था। आर्यसमाज स्थापित हो गया, मणिशंकर जटाशंकर और उनकी अनुपस्थियों में उत्तमराम निर्भयराम प्रधान का कार्य करने के लिए और हरगोविन्ददास द्वारकादास और नगीनदास ब्रजभूषणदास मंत्री का कर्तव्य पालन करने के लिए नियत हुए।'

आर्यसमाज के नियमों के विषय में इस जीवन-चरित में लिखा है कि 'स्वामीजी ने आर्यसमाज के नियम बनाये, जो मुद्रित कर लिये गये। इनकी 300 प्रतियां तो स्वामीजी ने अहमदाबाद और मुम्बई में वितरण करने के लिए स्वयं रख लीं और शेष प्रतियां राजकोट और अन्य स्थानों में बांटने के लिए रख ली गई जो राजकोट में बांट दी गईं, शेष गुजरात, काठियावाड़ और उत्तरीय भारत के प्रधान नगरों में भेज दी गईं। उस समय स्वामी जी की यह सम्मति थी कि प्रधान आर्यसमाज अहमदाबाद और मुम्बई में रहें।

आर्यसमाज के साप्ताहिक अधिवेशन प्रति रविवार को होने निश्चित हुए थे।' यह ध्यातव्य है कि राजकोट में आर्यसमाज की स्थापना पर बनाये गये नियमों की संख्या 26 थी। इसके बाद मुम्बई में 10 अप्रैल, सन् 1875 को आर्यसमाज की स्थापना हुई।

OO

WHERE DOES THE HAPINESS LIE

Mahatma Gopal Swami Saraswati

Who is happy and who is not, was the question, a man at Saharanpur (U.P.) posed to Maharishi Swami Dayananda Saraswati, a key figure in Indian religious and social renaissance in the later part of the 19 th Century. Swami Dayananda Saraswati, who was an erudite scholar of Vedas, and a philosopher with originality of purpose and direction, humbly stated, the happiness does not consist in outer gaiety and grandeur, enormous wealth and vast possessions, well furnished homes and exquisite costumes, delicious platter and tasty drinks, exhilarating entertainments and best possible comforts for living. Happiness lies in the peace and equilibrium (i.e., the balanced state) of mind.

Happiness, all in all, is a state of mind. However, before we may elaborate the subject further, here is an anecdote worth understanding. Alexander the Great, after conquering a good part of India, was planning to return to his homeland, when suddenly, he remembered the words of his own teacher, "India is a land of great thoughts and culture. Bring some of those thoughts for the benefit of yourself and your people. In India, Alexander came to know that such great thoughts could be had from learned 'Sadhus' and saints. So he called for a reputed saint to meet him at once.

The saint refused to call upon Alexander saying that since he did not want anything from him, he was not interested at all on calling upon him. Rather. Alexander should himself call upon him, if he wanted to know something from him. Finding no other way, reluctantly Alexander called upon the saint. The saint then asked Alexander, what all he wanted to achieve? Prompt was the reply, "to conquer the world". Will he then be happy? was the question. The saint asked. "Yes, why not; if my ambition was fulfilled, I would be the happiest man on the earth", was the reply.

The saint then stated, that with the resources at his command, he could conquer the world, if he so desired; but that would never make him happy. His worries and problems would have multiplied, by then, into leaps and bounds. The saint then asked Alexander to look at him. He had not conquered the world, but had conquered the world, but had conquered his own self, his mind, his passions and his senses. He had no ill will against anybody nor was afraid of anybody, because he had no possessions, at all. He always dwelt in God's benevolence and was under the care of God Almighty, He was the happiest man on the earth. As such, he should better conquer himself and develop affinity with God Almighty, if he wanted to be happy.

The message conveyed by Indian saint is the crux of Vedic thoughts and wisdom and holds good even to-day. Now, the question arises, if the happiness is the state of mind; what is mind? The mind in Indian philosophical thought comprises of 'Chitta', ;Manas' and 'Aham'. The faculty of liking, disliking, feelings; and memorizing is called 'Chita', the faculty of discriminating right and wrong is known as 'Buddhi' or intellect and that which takes decisions on the basis of the instructions from either 'Chitta' or 'Buddhi' is 'Manas', and lastly the one the implements the determination or otherwise of 'Manas' is called 'Aham'. 'Aham' is essence, is the executor power of self, (Jivatma) or the soul. Disciplining of mind comprising of 'Chitta', 'Buddhi', 'Manas' and 'Aham' is the ultimate key to happiness and that is why Seer Patanjali's 'Yoga Darshan' in its entirely is only an exercise in disciplining the aforesaid faculties of mind.

(Rest on the next edition) OO

THE WORLD NEEDS THE ARYA SAMAJ

By : Lt Col Vinaya Kumar (Retd.)

The surging human race is destined to emerge as a united spiritual entity and eventually discover one and only religion for the entire humankind. The aim of human beings is to achieve proficiency in every field of activities i.e. the state of humankind agreeing and working together as a whole. Look at the scientific fraternities who have always been indiscriminate in their choice of colleagues and research jointly without any concern about their caste and creed. The spiritual or say religious intellectualism needs to stay afloat in a secularized society. Do we need so many religions? There is a need of showing spiritual skill and religious understanding among the human beings by handling of the present complicated diversionary religious situations with due masterly approach.

The spiritually stands for providing spiritual clarity of religious beliefs and thoughts in direct and honest manner and speech with forthright approach. Sometimes, the religions of sorts develop ignorance of one another's cultures and that becomes the main reason for the reciprocal feeling of mistrust. The need of the hour is to transform the mistrust into reciprocal understanding of one another by assembling and discussing, at a common platform, to recognize human friendly faith to establish one and only World Religion for the entire human race. Such an achievement will convert the human society into the Arya Samaj. The literary meaning of 'Arya' is supreme and 'Samaj' means it is a society of supreme humanity, thereby making every human being to live a complete, happy and satisfied life.

The religion enjoys a pre-eminent position in the lives of most people in the world, say 95% of them. The gap between professed religiosity and practiced humanity seems to be growing wider. The power of religion to unite diverse groups under its umbrella and to make human beings rise above themselves has to be an important aspect of religious practice. Every state must bring clarity to the contours of the religions' right to practice and the right to maintaining its dignity in a society. A green religion needs to shun superstition, obscurantism i.e. practices of deliberately preventing somebody from understanding and discovering something and bigotry i.e. acts of expressing, strong, unreasonable beliefs or opinions. We need original thinkers in every religion with due commitment to seek change of heart through peaceful means.

Let the search for the world religion for the entire human race becomes the ultimate objective of the humankind. Let every state of world act as an upholder of every religion and create and encourage some NGOs to provide attractive spiritual vision and establish one and only religion for the entire humankind just as the scientific fraternity does. The scientists produce object and services for the benefit of the entire humanity or say the whole of living beings and the natural i.e. the green environment as well with a missionary zeal. Let such spiritual NGOs organize 'Reality Shows' where all the religions take part in a debate (Shastrath) to prove the supremacy of respective religious scriptures, beliefs rituals. Let the original mind come forward and work together to discover 'The World Human Religion' for the sake of achieving 'World Religious Harmony' and thereby the world peace as side=effect as well.

The Arya Samaj : Incidentally, the institutions of the Arya Samaj exist as socio-spiritual- organizations or say NGOs whose task is to humanize the human system and make it as a class-less human society with the sole aim of realizing one and the only green religion for the entire human race.

(Rest on the next edition) OO

नववर्ष की परम्परा और आर्य समाज

डॉ. अशोक आर्य
आर्य यूथ ग्रुप

भारतीय इतिहास में नव संवत्सर का विशेष महत्व है। चाहे अंग्रेजी राज्यकाल में नव संवत्सर की गरिमा को समाप्त करने प्रयास किया गया तो भी यह परम्परा आज तक अवगुण बनी हुई है। जहां आज सब कार्य आरम्भ करने के लिए ईस्वी सन् का सहारा लिया जाने लगा किंतु फिर भी गुलामी की यह जंजीर भारतीय संवत्सर के महत्व तथा इसके प्रयोग को समाप्त करने में सफल न हो सकी। यह ही वह कारण है कि आज भी जब कभी कोई शुभ मुहूर्त निकाला जाता है तो इसके लिए संवत् की तिथियां ही देखी जाती हैं। बच्चे का जन्म पत्र बनाना हो या फिर फिर विवाह की तिथि निश्चित करना हो, आज तक भी सदा काल के आधार पर संवत् को ही मुख्य मानते हुए गणना की जाती है।

यहां तक कि आज भी स्कूल का नव सत्र तथा व्यापार में बहियों का नवीकरण भी एक अप्रैल से ही किया जाता है। अंग्रेजी कलेंडर तो एक जनवरी से आरम्भ होता है। फिर यह सब कार्य एक अप्रैल से क्यों किये जाते हैं ? स्पष्ट है कि यह एक अप्रैल ही है, जिसके आसपास नव संवत्सर आरम्भ होने की तिथि घूमती है। इस सब से स्पष्ट होता है कि काल गणना में भारतीय नव संवत्सर का स्थान विशेष महत्वपूर्ण है। अत: आओ काल गणना की इस भारतीय विधि पर विचार करें।

भारतीय इतिहास विश्व का प्राचीनतम इतिहास है। जब इतिहास सबसे प्राचीन है तो यह भी निश्चित हो जाता है कि यहां की काल गणना भी सबसे प्राचीन व वैज्ञानिक है। संवत् चाहे किसी भी नाम से तथा कभी भी आरम्भ किये गए हों किंतु इन सबका आरम्भ एक ही दिन चैत्र प्रतिपदा से किया जाता रहा है। नए कार्यों का आरम्भ भी नववर्ष की प्रतिपदा से करने की परम्परा आज भी बनी हुई है। नए नामों से संवत् आरम्भ करने पर भी प्राचीनतम सृष्टि संवत् को भारत में आज भी स्मरण किया जाता है। तब ही तो सृष्टि संवत् लिखने की परम्परा आज भी निरंतर चली आ रही है। आज भी हम सृष्टि संवत् १९७२९४९११८ लिखना नहीं भूलते।

जिसका भाव यह है कि इस सृष्टि को बने आज १९७२९४९११८ वर्ष हो चुके हैं तथा १९७२९४९११९वें वर्ष के आगमन की प्रतीक्षा में, इसके आगमन को तैयार हैं, जो कुछ ही दिनों में आ रहा है। वर्तमान में जो संवत् भारत में सुप्रसिद्ध है, वह विक्रमी संवत् के नाम से जाना जाता है। भाव यह है कि इसका आरम्भ महाराजा विक्रमादित्य के नाम से २०७४ वर्ष पूर्व हुआ है। महाराज विक्रमादित्य ने सामाजिक, सर्वहितकारी कार्यों की एक प्रकार से बाट सी ला दी थी। इस कारण ही इस संवत् को चलाकर इस महामानव को प्रतिवर्ष याद किया जाता है।

उज्जैन के शासक विक्रमादित्य के नाम पर आधारित वर्तमान कालगणना के नामी राजा विक्रमादित्य ने शकों को पराजित करने के अवसर पर इस संवत् को आरम्भ किया था। इस संवत् का आरम्भ ईसा से ५८ वर्ष पूर्व किया गया था। इसका प्रथम दिन प्रतिपदा से जाना जाता है, जबकि सृष्टि का प्रथम दिन भी प्रतिपदा के नाम से ही जाना जाता है। इस दिन देशी महीने में चैत्र की एक तिथि होती है।

यह वही दिन है, जिस दिन सृष्टि के रचियता उस प्रभु का स्मरण कर विश्व के लोग उसे धन्यवाद देते हैं, जिस प्रभु ने इसकी रचना की। यहां पर हमें सुखमय जीवन यापन का अवसर दिया है। यह सृष्टि को वह दिन था, जिस दिन सूर्य की प्रथम रश्मि का इस धरती पर प्रथम बार दर्शन हुआ था, प्रथम बार सूर्य उदय हुआ था, यह धरती प्रथम बार अंधकार से निकल कर

भारतीय इतिहास विश्व का प्राचीनतम इतिहास है। जब इतिहास सबसे प्राचीन है तो यह भी निश्चित हो जाता है कि यहां की काल गणना भी सबसे प्राचीन व वैज्ञानिक है। संवत चाहे किसी भी नाम से तथा कभी भी आरम्भ किये गए हों किंतु इन सबका आरम्भ एक ही दिन चैत्र प्रतिपदा से किया जाता रहा है। नए कार्यों का आरम्भ भी नववर्ष की प्रतिपदा से करने की परम्परा आज भी बनी हुई है। नए नामों से संवत् आरम्भ करने पर भी प्राचीनतम सृष्टि संवत् को भारत में आज भी स्मरण किया जाता है। तब ही तो सृष्टि संवत् लिखने की परम्परा आज भी निरंतर चली आ रही है। आज भी हम सृष्टि संवत् 1972949118 लिखना नहीं भूलते। जिसका भाव यह है कि इस सृष्टि को बने आज 1972949118 वर्ष हो चुके हैं तथा 1972949119वें वर्ष के आगमन की प्रतीक्षा में, इसके आगमन को तैयार हैं, जो कुछ ही दिनों में आ रहा है। वर्तमान में जो संवत् भारत में सुप्रसिद्ध है, वह विक्रमी संवत् के नाम से जाना जाता है। भाव यह है कि इसका आरम्भ महाराजा विक्रमादित्य के नाम से 2074 वर्ष पूर्व हुआ है।

प्रकाश में आई थी। तब ही तो इस दिन का नामकरण भी रविवार अर्थात् सूर्यवार कहा गया था। नक्षत्रों की गणना करने वालों के अनुसार उस दिन सभी नक्षत्र मेष राशि में थे।

नक्षत्र गणना करने वाले तो इसके महीनों के नामकरण की नक्षत्रों को ही मानते हैं। उनका मानना है कि चित्रा नक्षत्र में आरम्भ होने के कारण वर्ष के प्रथम महीने का नाम चैत्र रखा गया। वैशाख नक्षत्र से वैशाख महीने का नामकरण हुआ। ज्येष्ठ से ज्येष्ठ महीना बना, उत्तर आषाढ़ ही आषाढ़ महीने का जन्मदाता बना, श्रवण ने श्रावण नामक महीना दिया, उतरा भाद्रपद नक्षत्र के कारण भादों का महीना अस्तित्व में आया, अश्विन महीने का जन्मदाता अश्विन नक्षत्र ही है, क्रतिका नक्षत्र से कार्तिक, मृगशिरा से मार्गशीर्ष, अगहन् पौष ने पूस तथा माघ नक्षत्र से माघ महीने का नाम रखा गया।

इस संवत् के आरम्भ में ही नई फसलें पक कर तैयार होती हैं। (सृष्टि की उत्पत्ति के समय भी पैदा होने वाले प्रथम पुरुष को पकी हुई फसलों के ही दर्शन हुए थे) नई फसलों के आने से किसानों के ही नहीं व्यवसाईयों के मन कमल भी खिल उठते हैं। वह खुशी से फूले नहीं समाते तथा नाच गानों के द्वारा अपनी खुशी प्रकट करते हैं। यह खुशियों से भरपूर अवसर होता है। नई फसलें किसान का घर भर देती हैं, जिससे उसका भावी जीवन सुखदायी होता है तो यह व्यापार की प्रगति का भी साधन होता है। इस कारण व्यवसायी लोग अपने नए खाते की पुस्तकें लगाते हैं, उनकी तिजोरी भी भरने लगती है। बच्चों को सफलता के पश्चात नई कक्षा में जाना होता है। इस कारण उनकी खुशी का भी कोई पार नहीं होता। इन सब कारणों से इसे फसली संवत् भी कहते हैं।

इस दिन सृष्टि की रचना तो हुई ही थी, मर्यादा पुरुषोत्तम राम का राजतिलक भी तो इस दिन ही हुआ था। इतना ही नहीं महाराज युधिष्ठिर का राजतिलक भी इस दिन ही हुआ था। हमारी मां आर्य समाज, जिसने इस धरती से अज्ञान, अन्याय तथा अभाव का नाश किया, नारी व शूद्र की दशा को सुधारा, गोरक्षा व मात्र भाषा हिंदी को आगे लाए, स्वदेशी की महत्ता संसार के आगे रखी, स्वाधीनता का मंत्र दिया का जन्म भी इस दिन ही हुआ था क्योंकि स्वामी दयानन्द सरस्वती जी ने इस दिन बम्बई में १० अप्रैल १८७५ को आर्यसमाज की स्थापना की थी।

इस कारण विश्व भर की आर्य समाजों में यह दिन स्थापना दिन के नाम से बड़ी शान के साथ मनाया जाता है। इस प्रकार की अन्य भी अनेक यादें इस दिन के साथ जुड़ी हैं। अत: हम भारतीयों का नववर्ष तो यह नव संवत्सर ही है। हमें अंग्रेजी दास्तां वाला नववर्ष न मना कर यह भारतीय नव संवत्सर मनाते हुए एक दूसरे को बधाई देना चाहिए। इस अवसर पर मेरी ओर से आप सब हार्दिक बधाई स्वीकार करें तथा आगामी वर्ष में प्रवेश करते हुए हर्ष का अनुभव करें। आप सब की आगामी वर्ष की सब योजनाएं सफल हों तथा आप शत वर्ष तक जन कल्याण के कार्यों में लगे रहें, आर्य समाज के माध्यम से कार्य करते हुए विश्व कल्याण की इस योजना को आगे बढ़ाते रहे, मेरी शुभकामाएं आप के साथ सदा रहेंगी। ○○

महर्षि दयानन्द गौरव गाथा

ऐ ऋषि! तूने बचायी डूबती नैय्या वतन की
बन के माली आन रखी तूने इस उजड़े चमन की।
मिट रहे थे चिह्न सारे ज्ञान और विज्ञान के
हम लड़ा करते रहे बस नाम पर भगवान के
रौशनी की दीप बन कर, मिट गई स्याही पतन की
ऐ ऋषि! तूने बचायी डूबती नैय्या वतन की।।

बाल विधवाओं की आहें, फलक पर चिनगारियों सी
गिर रही थी साख घर की, राख बनकर आंधियों सी
तूने रोते को हंसाया, दाद दूं क्या इल्मोफन की
ऐ ऋषि! तूने बचायी डूबती नैय्या वतन की।।

भूल बैठे नाम तक थे, आर्यजन अपनी निशानी
बूढ़े पुरखे कह रहे थे, तोता मैना की कहानी
तूने आकर सुधि दिलाई, वेद के पाठन-पठन की।
ऐ ऋषि! तूने बचायी डूबती नैय्या वतन की।।

मूर्तियों की कर इबादत, देवदासी थे बनाते
कत्ल कर जिंदा पशु को देवमंदिर में चढ़ाते।
दूर की तूने जहालत, धर्म के बिगड़े चलन की
ऐ ऋषि! तूने बचायी डूबती नैय्या वतन की।।

वेदराही देख लो फिर आ रहा है इन्कलाब
जग रहा है देश सारा, पूरे होंगे ऋषि के ख्वाब
ध्यान से सुनना शदाएं, स्वर्ण वेदयुग के आगमन की
ऐ ऋषि! तूने बचायी डूबती नैय्या वतन की।।

➲ **शिवकरण दुबे 'वेदराही'**

तेरा जग में आना

ऐ दयानन्द तेरा जग में आना, भूल पायेगा क्या ये जमाना
आर्य जाति थी निद्रा में सोई यहां, मांझी पतवार बिन नाव खोई यहां
वो अहारे से दुर्गम से पथ पर निरह, यूं अकेले तेरा बढ़ते जाना।।

बालपन में यहां होती थी शादियां, शादियां क्या कहे वह थी बरबादियां
ये तो अन्याय है तेरा उद्घोष था, आग में जिंदा तन को जल जाना
ऐ दयानन्द अगर जो तू आता नहीं, ये अंधेरा गुलामी का जाता नहीं
ब्रह्मचर्य व संयम की शक्ति को दे, रास्ता सबको सच्चा दिखाना।।

कृण्वन्तो विश्वमार्यम् : नववर्ष मंगलमय हो

महेन्द्र सिंह आर्य

विश्व की मानव जाति का नववर्ष चैत्र शुक्ल पक्ष प्रतिपदा बसंत अश्विनी को होता है। जो अबकी बार 18 मार्च 2018 को हो रहा है। आज समस्त संसार एक जनवरी के रूप में ईसाई जाति का जन्म दिन मनाता है। क्योंकि अंग्रेजों का राज्य पूरे विश्व पर रहा इसलिए ईशा मसीह के जन्म दिन को नववर्ष मान लिया। क्या सन् 1-1-1 अर्थात् 2018 से पहले क्या संसार नहीं था? आप कहो था तो फिर ये नववर्ष नहीं यह तो ईसाई जाति का उदय दिवस है। जैसे कृष्ण सम्वत् 5242, जैन सम्वत् 2545, विक्रमी सम्वत् 2075, राष्ट्रीय शोक 1940, इस्लामी हिजरी 1440, इसी प्रकार बौद्ध सम्वत्, राम सम्वत्, सिख।

ओ३म् भूभुर्वः स्वः। तत्सवितुर्वरेण्यं भर्गो देवस्य धीमहि। धियो यो नः प्रचोदयात॥

बहनों और बन्धुओं समस्त विश्ववासियों को नववर्ष की शुभकामना! आशा है आप सभी अपने ग्राम व घर पर यज्ञ, साथियों को शुभकामनाओं व शुभ संकल्पों के साथ नववर्ष 1960853118 अथवा एक अरब छानवें करोड़ आठ लाख तरेपन हजार एक सौ अठारह का प्रारम्भ हर्षोल्लास के साथ करेंगे।

विश्व की मानव जाति का नववर्ष चैत्र शुक्ल पक्ष प्रतिपदा बसंत अश्विनी को होता है। जो अबकी बार 18 मार्च 2018 को हो रहा है। आज समस्त संसार एक जनवरी के रूप में ईसाई जाति का जन्म दिन मनाता है। क्योंकि अंग्रेजों का राज्य पूरे विश्व पर रहा इसलिए ईशा मसीह के जन्म दिन को नववर्ष मान लिया। क्या सन् 1-1-1 अर्थात् 2018 से पहले क्या संसार नहीं था? आप कहो था तो फिर ये नववर्ष नहीं यह तो ईसाई जाति का उदय दिवस है।

जैसे कृष्ण सम्वत् 5242, जैन सम्वत् 2545, विक्रमी सम्वत् 2075, राष्ट्रीय शोक 1940, इस्लामी हिजरी 1440, इसी प्रकार बौद्ध सम्वत्, राम सम्वत्, सिख। राधा स्वामी, आसाराम बापू। सुधांशु महाराज आदि सबका कोई स्थापना दिवस है। इसी प्रकार एक जनवरी है।

उपरोक्त विवरण से विदित होता है कि संसार तो 2017 वर्षों से पूर्व भी था। लगता है कि सन् 2017 नववर्ष नहीं हो सकता क्योंकि 5242, 2545,2075 आदि तो सन् 2017 से दोगुने से भी अधिक है। पहले भी हमारे पूर्वज नववर्ष मनाते थे। उससे ही तो हमको सम्वत् 5242, 2545, 2075 आदि का बोध है। विचार करो क्या सब उपरोक्त स्थापना दिवस नववर्ष हो सकता है। तो 5242, 2545, 2075, 1440 आदि स्थापना दिवस नववर्ष क्यों नहीं।

उपरोक्त कोई भी नववर्ष नहीं है। क्योंकि प्रत्येक में अनावस्था दोष आता है। क्योंकि कृष्ण से पहले यशोदा वासुदेव आदि भी तो थे। नववर्ष का अर्थ है संसार का जन्म होना अथवा मनुष्य जाति का जन्म होना। यदि सन् 2017 नववर्ष तो 2016 साल से पहले संसार के अंदर कोई भी मनुष्य नहीं था। तो कोई भी मकान, कपड़ा, संचित अन्न आदि नहीं था। तो क्या इतनी सर्दी में जन्मा मनुष्य जब कोई साधन सहारा न हो जीवित रह सकता था नहीं।

प्रश्न उठता है कि फिर नववर्ष क्या है, संसार का नववर्ष प्रत्येक चैत्र मास को पहले नवरात्रे को आता है। अबकी बार 18 मार्च 2018 को संसार का नववर्ष है। संसार को बने 1960853118 अथवा एक अरब छानवे करोड़ आठ लाख तरेपन हजार क सौ अठारह वर्ष। 17 मार्च 2017 को पूरे हो जाएंगे और 18 मार्च 2018 से 1960853119वां वर्ष प्रारम्भ हो जायेगा।

अब आप विचार कीजिए कि आधे चैत्र अर्थात् 18-3-18 को जन्मा मनुष्य बिना किसी पहले मनुष्य व बिना पहले साधन के जीवित रह सकता है। क्योंकि नये-नये अन्न खाने के लिए पैदा हो जाते हैं, सर्दी भी समाप्त हो जाती है। बिन कपड़ों के भी जीवन रह सकता है। आप प्रश्न कर सकते हैं कौन आर्य बैठा था जो गणना कर रहा था तो मेरा भी प्रश्न है 2017 वर्ष से कौन सा ईसाई जिंदा है जो गणना कर रहा है।

अर्थात् जैसे हम नित्य नये दिनांक डालते हैं और नित्य नए एक दिन बढ़ जाता है। इसी प्रकार जब शादी आदि शुभ अवसर पर आचार्य लोक हवन करते हैं, संकल्प पाठ कराते हैं, व्यवसायी अपने खातों में नित्य नये दिनांक डालते हैं।

इस प्रकार समय का बोध है, क्योंकि ईश्वर ज्ञान विज्ञान में सबसे ऊपर है। वह गुरुओं का भी गुरु है। वह सबकी माता है, वह एक जनवरी को जब कोई साधन ना हो, मरने के लिए ही अपनी संतानों को पैदा नहीं कर सकता। उपरोक्त तथ्यों से सिद्ध हो जाता है कि एक जनवरी नववर्ष नहीं है। चैत्र मास का पहला नवरात्रा ही नववर्ष है, उसको ही नववर्ष के रूप में मनाना चाहिए।

फोन : 9811415453

वैदिक परंपरा

डॉ. रामराज उपाध्याय

भारतीय संस्कृति का मूल स्रोत वेदों को माना जाता है। वेदों में विश्व वांगमय की अमूल्य निधि छिपी हुई है। वैदिक संस्कृति संसार के समस्त प्राणियों के लिए कल्याणकारी चिंतन प्रस्तुत करती है। प्रथम वेद ऋग्वेद का प्रसिद्ध मंत्र स्वस्ति पन्थामनुचरेमसूर्याचन्द्रमसाविव। पुनर्ददताघ्न्ताजानता सं गमेमहि में वेद भगवान की कामना है कि स्वस्ति यानी कल्याणकारी पथों का हम सभी अनुकरण करें। स्वस्ति शब्द की व्याख्या में आशीः, क्षेमम्मिलता है। यहां कल्याण का प्रथम संकेत आशीर्वाद की ओर जाता है। एक ऐसी प्रक्रिया है जिसमें किसी के कल्याण के लिए मन से भावना की जाती है।

अर्थात् यह एक आभ्यन्तरिक कामना है और यह कामना जितना कल्याणकारी है उतना कल्याणकारी अन्य कोई उपाय नहीं है। वैदिक परम्परा कहती है कि संसार के समस्त प्राणियों को परस्पर एक दूसरे के कल्याण का चिंतन करना चाहिए। वेद का प्रसिद्ध मंत्र देहि मे ददामि ते से यह बात स्पष्टतया प्रमाणित होती है कि तुम मुझे दो और मैं तुझे दूं। प्रश्न उठता है क्या देना। उत्तर मिलता है जो देने लायक हो। यानी तुम समाज को या किसी दूसरे को क्या देने लायक हो। जो देने लायक हो उससे समाज की सेवा करो और समाज भी जो कुछ देने लायक होगा, वह प्रदान करेगा। श्रीमद्भगवद्गीता में भी परस्परं भवयन्त: की व्याख्या करते हुए अर्जुन से भगवान श्रीकृष्ण ने कहा कि हमें एक दूसरे की भावनाओं को समझना चाहिए। एक-दूसरे के साथ सहयोगात्मक प्रकृति से सुपथ की ओर अग्रसर होना चाहिए। वर्तमान में वैदिक परम्परा को ठीक ढंग से न समझ पाने के कारण समाज को आघात पहुंचा है। लोग एक दूसरे से आगे बढ़ने की होड़ में अकल्याणकारी मार्गों का चयन कर रहे हैं।

परिणामत: आपसी ईर्ष्या, द्वेषादि को बढ़ावा मिल रहा है। अशांति का वातावरण निर्मित हो रहा है जो न केवल मानव के लिए अपितु जीव मात्र के लिए अहितकर है। इन समस्त तथ्यों का रहस्य समझकर वेदों में इन द्वंद्वों के बढ़ने के मूल स्रोतों पर विचार किया गया। वेदों के अनुसार व्यक्ति वही विकसित हो सकता है जो सूर्य एवं चंद्रमा की भांति अबाध गति से सबके साथ-साथ चलता है। यह सर्वांगीण विकास का ज्वलंत उदाहरण है।

विकास को वेद स्वीकार नहीं करते क्योंकि वह विकास असंतुलन उपस्थित करता है। सामाजिक संतुलन हेतु संगमेमहि का सिद्धांत हृदयंगम करना होगा। ऋग्वेद कहता है कि कल्याणकारक, नदबने वाले, पराजित न होने वाले, उच्चता को पहुंचने वाले शुभ कर्म चारों ओर से हमारे पास आवें। प्रगति को न रोकने वाले, प्रतिदिन सुरक्षा करने वाले देव हमारा सदा संवर्धन करने वाले हों। सरल मार्ग से जाने वाले देवों की कल्याण कारक सुबुद्धि तथा देवों की उदारता हमें प्राप्त होती रहे।

देवों की मित्रता करें, देव हमें दीर्घ आयु हमारे दीर्घ जीवन के लिए दें। ये सभी वैदिक मंत्रार्थ कल्याण कर मानव जीवन के लिए अत्यंत ही विचारणीय हैं। देवों की उदारता से तात्पर्य है कि यदि उदारता में कहीं दानवत्व छिपा हुआ है तो वह उदारता ग्रहण योग्य नहीं है। वही उदारता हमें ग्रहण करना चाहिए, जिसमें कल्याण निहित हो। हमारी मित्रता भी उच्च विचारवान् व्यक्ति के साथ हो ऐसा प्रयास करना चाहिए। यदि निम्न विचारक व्यक्ति के साथ हमारी मित्रता होगी तो यह कल्याणयुक्त नहीं हो सकती है। इस प्रकार से समस्त जनों के कल्याण की मूल भावना वेदों में अंतर्निहित है। जिसे उज्ज्वल भविष्य हेतु अत्मसात् करने की आवश्यकता है। ○○

वैदिक परम्परा कहती है कि संसार के समस्त प्राणियों को परस्पर एक दूसरे के कल्याण का चितन करना चाहिए। वेद का प्रसिद्ध मंत्र देहि में ददामितेसे यह बात स्पष्टतया प्रमाणित होती है कि तुम मुझे दो और मैं तुझे दूं। प्रश्न उठता है क्या देना। उत्तर मिलता है जो देने लायक हो। यानी तुम समाज को या किसी दूसरे को क्या देने लायक हो। जो देने लायक हो उससे समाज की सेवा करो और समाज भी जो कुछ देने लायक होगा, वह प्रदान करेगा। श्रीमद्भगवद्गीता में भी परस्परं भवयन्त: की व्याख्या करते हुए अर्जुन से भगवान श्रीकृष्ण ने कहा कि हमें एक दूसरे की भावनाओं को समझना चाहिए। एक-दूसरे के साथ सहयोगात्मक प्रकृति से सुपथ की ओर अग्रसर होना चाहिए।

नव आगमन की शुभकामनाएं

श्री विजेन्द्र कठपालिया, उप प्रधान के धेवता एवं श्रीमती गायत्री मीणा, उपप्रधाना महिला समाज के पोते के जन्म पर बधाई एवं शुभकामनाएं

शरीर को कई तरह से फायदा पहुंचाता है अदरक

सर्दी-खांसी में फायदेमंद : छोटे बच्चों को अक्सर सर्दी-खांसी की शिकायत रहती है। ऐसे में बच्चों को अगर अदरक के रस में शहद डालकर दिया जाए तो इससे उन्हें काफी लाभ होता है। दरअसल, अदरक में एंटीऑक्सीडेंट्स व एंटीइन्फ्लामेट्री गुण पाए जाते हैं जो हर तरह की एलर्जी व संक्रमण से लड़ने में महत्वपूर्ण भूमिका निभाते हैं।

कैंसर से बचाव : यह तो आप जानते ही हैं कि अदरक में एंटी- ऑक्सीडेंटस पाए जाते है लेकिन यही एंटी-ऑक्सीडेंटस आपके शरीर को कैंसर से लड़ने की क्षमता प्रदान करते हैं। अगर आप नियमित रूप से इसका सेवन करें तो इससे आपको ब्रेस्ट, स्किन, लंग्स और प्रोस्टेट कैंसर से आसानी से बचाव किया जा सकता है।

महिलाओं के लिए विशेष उपयोगी : महिलाओं को तो अदरक को अपनी डाइट में किसी न किसी रूप में अवश्य शामिल करना चाहिए। इसमें मौजूद एंटीइन्फ्लामेट्री गुण महिलाओं के विशेष रूप से लाभकारी माने जाते हैं। खासतौर से, पीरियड्स के दौरान तो इसका सेवन उन्हें दर्द व गैस्ट्रिक की समस्या से काफी राहत दिलाता है।

नियंत्रित करे ब्लड प्रेशर : शायद आपको जानकर हैरानी हो लेकिन अदरक की मदद से उच्च रक्तचाप की समस्या को काफी हद तक कंट्रोल किया जा सकता है। इतना ही नहीं, अदरक हाई ब्लडप्रेशर और लो ब्लडप्रेशर दोनों ही रोगियों के लिए लाभदायक है। अगर अदरक के रस का सेवन किया जाए तो यह खून को पतला करने में मदद करता है, जिससे शरीर में रक्त का प्रवाह सही तरह से होता है और आपको ब्लड प्रेशर की समस्या का सामना नहीं करना पड़ता।

अस्थमा के मरीज अवश्य करें सेवन : अस्थमा के मरीजों के लिए अदरक किसी वरदान से कम नहीं है। अगर आप अस्थमा के मरीज हैं तो अदरक के रस में शहद या मेथी का पाउडर हर रोज सुबह सेवन करें।

पाचन में मददगार : यदि अदरक को अपनी आहार का हिस्सा बनाया जाए तो इससे पेट की समस्याओं जैसे अपच, खट्टी डकार, कब्ज, गैस आदि में तो फायदा होता है ही, साथ ही यह पाचन तंत्र की कार्यप्रणाली को भी आसान बनाता है। दरअसल, अदरक भोजन में मौजूद प्रोटीन को तोड़ने में मदद करता है जिस वजह से व्यक्ति को पाचन संबंधी परेशानी नहीं होती।

स्वस्थ रहने के रहस्य :

- प्रातः काल ब्रह्म मूहर्त में उठें और गायत्री मंत्र का जाप करें। ब्रह्म मूहर्त में उठने वाला कभी बीमार नहीं होता।
- प्रातः उठने के तुरंत बाद मुंह में जल भरकर आंखों पर 15 या 20 बार छींटें मारने से दृष्टि कमजोर नहीं होती और चश्मा पहनने वालों का चश्मा भी उतर जाता है।
- स्नान या कुल्ला करते समय गले में तालू को अगूठे से साफ करें। इससे कभी जुकाम नहीं होता और आंख, कान, नाक और गले के रोग नहीं होते।
- पेशाब व पखाना जाते समय दांतों को दबा कर बैठें इससे दांत मजबूत होते हैं और दांतों के रोग नही होते।
- प्रातः तांबे या चांदी के बर्तन में रात का रखा हुआ पानी पीने से शौच खुलकर आता है और इससे कब्ज, बवासीर, रक्तपित नेत्र संबंधी रोग एवं कफ से होने वाले रोग नहीं होते।
- फल, सलाद, कच्चे खाद्य पदार्थ एवं अंकुरित अन्न अधिक मात्रा में लें।
- भोजन चबा-चबाकर एवं धीरे-धीरे शांतिपूर्वक ग्रहण करें।
- सप्ताह में एक दिन केवल रसाहार एवं जल पर उपवास करें।
- भोजन, भोग के बाद एवं नहाने से पहले हमेशा पेशाब को जाएं इससे मधुमेह एवं कमजोरी नहीं होगी और गुर्दे के रोग नहीं होंगे।
- भोजन के एक घंटे बाद पानी पीयें इससे वायुरोग नहीं होंगे, यदि पीना है तो भोजन के आधा घंटा पहले पीयें।
- भोजन के बाद दाएं हाथ को अच्छी तरह धोकर 5-6 बार मुंह में पानी भरकर आंखों को स्वच्छ पानी से धोना चाहिए इसे नजर तेज होती है व चश्मा उतर जाता है।
- भोजन करने के बाद टहलना चाहिए या वज्र आसन में 5-10 मिनट तक बैठना चाहिए।
- अधिक गर्म व ठंडी वस्तुएं पाचन क्रिया के लिए हानिकारक हैं।
- भोजन करने के बाद आठ सांस पीठ के बल लेटकर सोलह सांस दाहिनी करवट लेटकर तथा बत्तीस सांस बांई करवट लेटकर लें। इससे भोजन शीघ्र हजम होगा तथा वायु रोग नहीं होगा। रुकी हुई वायु भी निकल जाएगी।
- चिंता, क्रोध और थकावट में कभी भोजन न करें।
- बिना तकिए के सोने से हृदय और मस्तिष्क मजबूत होते हैं।
- कभी मुंह ढककर या कमरे के दरवाजे बंद करके नहीं सोना चाहिए इससे कई प्रकार के भयानक रोग हो जाते हैं।
- पांव के तलवों में सरसों के तेल की मालिश करने से नेत्र ज्योति बढ़ती है।
- 40 वर्ष के बाद तीन सफेद चीज कम कर देनी चाहिए- चीनी, नमक, और घी।

➲ यज्ञवीर चौहान- 9810493055

समाचार - सूचनाएं

- 1 मार्च को दिल्ली सभा की ओर से आर्य परिवार होली मंगल मिलन का कार्यक्रम राजा बाजार, कनाट प्लेस रघुमल आर्य कन्या सीनियर सेकेंड्री स्कूल में किया जा रहा है।
- 17 मार्च को मावलंकर हॉल में नवसंवत्सर व आर्य समाज स्थापना दिवस, दिल्ली केंद्रीय सभा के द्वारा मनाया जा रहा है।
- 18 मार्च को आर्य समाज आर्ष गुरुकुल नोएडा में भव्य कार्यक्रम नवसंवत्सर व आर्यसमाज स्थापना दिवस के उपलक्ष्य में प्रभात फेरी, यज्ञ, भजन, प्रवचन, साहित्य वितरण व ऋषि भोज का कार्यक्रम किया जा रहा है।
- 23 मार्च को केंद्रीय आर्य युवक परिषद के तत्वावधान में भव्य संगीत संध्या, शहीदों को नमन, आर्यसमाज सुभाष नगर में किया जा रहा है।
- 11 फरवरी को केंद्रीय आर्य युवक परिषद के तत्वावधान में सांसद श्रीमती मीनाक्षी लेखी के निवास स्थान पर महर्षि दयानन्द जन्मोत्सव बड़ी धूमधाम से मनाया गया जिसमें अनेक संस्थाओं व समाजों के सदस्यों व अधिकारियों ने महर्षि को नमन किया।
- 11 फरवरी को जेएनयू कन्वेशन सेंटर में महर्षि के जन्मोसत्व पर भव्य संकल्प महोत्सव का आयोजन किया गया। अनेक विद्वानों, संस्थाओं, गुरुकुलों ने उपस्थित होकर महर्षि को नमन किया। अध्यक्षता सांसद स्वामी सुमेधानन्द जी व मुख्यवक्ता डा. वेद प्रताप वैदिक रहे।
- 11 फरवरी को आर्यसमाज, आर्षगुरुकुल नोएडा में ऋषि जन्मोत्सव, बोधोत्सव के अवसर पर विशेष कार्यक्रम आयोजित किया गया। विशेष यज्ञ के पश्चात् ऋषि समर्पित भजन, श्रीमती मन्जु नारंग वैदिक विदुषि द्वारा महर्षि के संस्मरण से भावपूर्ण नमन व श्रीमती आदर्श बिश्नोई द्वारा कविता की प्रस्तुति की गई। आचार्य डा. जयेन्द्र जी द्वारा महर्षि के उपकारों से उपस्थित जनमानस को अवगत कराया गया। महर्षि को नमन किया गया व उनके द्वारा सत्य मार्ग पर चलने का संकल्प लिया गया। ऋषि भोज की व्यवस्था की गई व अनेकों आने जाने वाले लोगों को प्रसाद बांटा गया व आर्ष साहित्य वितरित किया गया।
- 12-13-14 फरवरी को टंकारा, महर्षि जन्मभूमि पर जन्मोत्सव व बोधोत्सव मनाया गया। जिसकी अध्यक्षता डा. पूनम सूरी, अध्यक्ष डीएवी मैनेजिंग कमेटी द्वारा की गई। कार्यक्रम पूर्व की भांति सफलं रहा।
- 13 फरवरी को दिल्ली सभा के तत्वावधान में भव्य महर्षि बोधोत्सव का कार्यक्रम सम्पन्न किया गया। जिसमें अनेकों आर्यों ने ऋषि को नमन किया व पाखंड को दूर करने का संकल्प लिया। मधुर भजन व बच्चों द्वारा प्रस्तुति की गई।

विनम्र श्रद्धांजलि : श्रीमती प्रीती सिन्हा, पुत्रवधु माता लक्ष्मी सिन्हा, श्री पूर्ण प्रकाश गोयल, वानप्रस्थी, श्री श्रीकांत, सुपुत्र माता सावित्री छाबड़ा जी पिछले दिनों ईश्वर की न्यायव्यवस्था अनुसार इस नश्वर संसार को छोड़कर हमसे बिछुड़ गए। प्रार्थना सभा में संस्थाओं के अधिकारियों व सदस्यों ने श्रद्धासुमन अर्पित किए। परमपिता परमात्मा से दिवंगत आत्माओं के प्रति उनकी सद्‌गति व शान्ति की प्रार्थना की गई।

सूचना : जनवरी मास में जिन माननीय सदस्यों का वार्षिक शुल्क समाप्त हो गया है उनसे सविनय अनुरोध है कि अपना वार्षिक शुल्क 250/-रुपया आर्य समाज, बी-69 सेक्टर-33, नोएडा (उप्र), को भिजवाने की कृपा करें ताकि उनकी पत्रिका 'विश्ववारा संस्कृति' निरंतर प्रेषित की जाती रहे।

■ प्रबंध संपादक : 9871798221

'विश्ववारा संस्कृति' के नियम व सविनय निवेदन

1. यदि 'विश्ववारा संस्कृति' दिनांक 15 तक नहीं पहुंचती है तो आप प्रधान संपादक के नाम पत्र डालें। पत्र मिलते ही 'विश्ववारा संस्कृति' पुनः भेज दी जायेगी।

2. वार्षिक शुल्क तथा आजीवन शुल्क मनीआर्डर द्वारा आर्य समाज, बी-69, सेक्टर-33, नोएडा के नाम भेजें। वीपी, रजिस्ट्री द्वारा नहीं भेजा जायेगा।

3. लेख संपादक 'विश्ववारा संस्कृति' के नाम भेजें, लेख छोटे, सरल, संक्षिप्त होने चाहिए तथा स्पष्ट, शुद्ध एवं सुंदर लेख कागज के एक ओर लिखे होने चाहिए।

4. 'विश्ववारा संस्कृति' में विज्ञापन भी दिये जाते हैं, परंतु विज्ञापन शुद्ध एवं वास्तविक वस्तु का ही दिया जायेगा।

5. यह 'विश्ववारा संस्कृति' पत्रिका समाज-सुधार की दृष्टि से मानव कल्याणार्थ निकाली जाती है। इसमें आपको धर्म, यज्ञ कर्म, समाज सुधार, देश व समाज की स्थिति, ब्रह्मचर्य, स्वास्थ्य, योगासन, सदाचार, संस्कार, नैतिकता, वैदिक विचार, शिक्षा आदि एवं अन्य ऐसे विषयों पर लेख पढ़ने को मिलेंगे।

6. 'विश्ववारा संस्कृति' के दस ग्राहक बनाने वाले सज्जन को एक वर्ष तक निःशुल्क 'विश्ववारा संस्कृति' भेजी जायेगी तथा पचास ग्राहक बनाने वाले सज्जन को दो वर्ष निःशुल्क पत्रिका भेजी जायेगी तथा उसका फोटो सहित जीवन-परिचय 'विश्ववारा संस्कृति' में निकाला जायेगा।

7. अन्य पत्र-पत्रिकाओं में पहले छपा हुआ लेख 'विश्ववारा संस्कृति' में नहीं छापा जायेगा।

8. अनाधिकृत रूप से लिए लेख, रचना, कविता के लिए प्रेषक ही उत्तरदायी होंगे।

आर्य कै. अशोक गुलाटी
प्रबंध संपादक

'विश्ववारा संस्कृति'
आर्य समाज, बी-69, सेक्टर-33, नोएडा, उप्र
संपर्क सूत्र : 0120-2505731, 9871798221
ई-मेल : info.aryasamajnoida33@gmail.com
captakg21@yahoo.co.in

हिन्दी के उन्नायक : स्वामी दयानंद सरस्वती

(गतांक से आगे...)

हिंदी के प्रति उनके उत्कट प्रेम और जुड़ाव को व्यक्त करने वाले अनेक उदाहरण उनके जीवन-चरित्र में घुले-मिले हैं। भारत की करोड़ों-करोड़ जनता यदि अज्ञान और अविद्या के अंधेरे में है तो स्वदेश की भूमि को छोड़कर विदेशों में वैदिक आदर्शों के प्रचार-प्रसार को उन्होंने अनुचित माना और अंग्रेजी सीखकर धर्म प्रचार हेतु विदेश यात्रा का प्रस्ताव भी ठुकराया। अपने ग्रंथों के अनुवाद की अनुमति भी हिंदी प्रेम के कारण नहीं दी- 'जिन्हें सचमुच मेरे भावों को जानने की इच्छा होगी वे इस 'आर्य भाषा' को सीखना अपना कर्तव्य समझेंगे।' स्वामी जी ने हिंदी साहित्य सृजन की दृष्टि से कविता, कहानी, उपन्यास, नाटक भले ही न लिखे हों, लेकिन धर्म-प्रचार और आर्यसमाज के उद्देश्यों, सिद्धान्तों और विचारों के प्रचार-प्रसार के लिए उन्होंने जिस साहित्य का निर्माण किया, उसने कई अर्थों में हिंदी को बढ़ाया। 'सत्यार्थ प्रकाश' के अतिरिक्त उनके अन्य ग्रन्थ हैं- अनुभ्रमोच्छेदन, अष्टाध्यायी भाष्य, आत्मचरित, आर्याभिविनय, आर्योद्देश्य रत्नमाला, कुरान-हिंदी, गोकरुणा-निधि, गौतम-अहल्या की कथा, जालंधर की बहस, पंचमहायज्ञविधि (संध्या भाष्य), भाव्यार्थ, पोपलीला, प्रतिमापूजन विचार, प्रश्नोत्तर हलधर, प्रश्नोत्तर उदयपुर, भ्रमोच्छेदन, मेला चांदपुर, ऋग्वेदादि-भाष्यभूमिका, ऋग्वेद भाष्य, यजुर्वेद भाष्य, वेदविरुद्ध मत खंडन, वेदांतिध्वांत निवारण, व्यवहारभानु, शिक्षापत्री ध्वांत निवारण, संस्कार विधि, संस्कृत वाक्य प्रबोध, सत्यासत्य विवेक, वर्णोच्चारण, संधि विषय, नासिक, आख्यातिक, पारिभाषिक, सौवर, अनादि कोष, निघंटु, पाणिनि के ग्रंथ अष्टाध्यायी, धातुपाठ, गणपाठ, शिक्षा व प्रातिपदिक और आलंकारिक कथा। OO

गुरुकुल के विद्यार्थियों को पुरस्कार देते संस्था के प्रधान श्री रविन्द्र सेठ, उपप्रधान श्री विजेन्द्र कठपालिया एवं मंत्री आर्य कै. अशोक गुलाटी जी।

गणतंत्र काव्योत्सव में कवियों को सम्मानित करते आर्य कै. अशोक गुलाटी।

ब्र. मानस को पुरस्कृत करते संस्था के प्रधान, उपप्रधान एवं मंत्री जी

आर्ष गुरुकुल के ब्रह्मचारी प्राणायाम करते हुए।

ओ३म्

Your child's future with Indian culture...

SHIVALIK GURUKUL

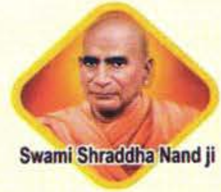

C.B.S.E. Pattern Only for Boys

(क) शिक्षा (आधुनिक शिक्षा पद्धति के साथ-साथ वैदिक धर्म के आलोक में नैतिक शिक्षा द्वारा जीवन-निर्माण)।

(ख) सुरक्षा (शारीरिक, मानसिक, बौद्धिक एवं चारित्रिक)।

(ग) संस्कार (शरीर व आत्मा को श्रेष्ठ गुण, कर्म एवं स्वभाव से सुशोभित करना)।

(घ) सेवा (गुरुकुल में प्राप्त उत्तम गुणों के माध्यम से परिवार, समाज, राष्ट्र एवं विश्व की उन्नति के लिए अपना सात्त्विक योगदान सेवा के रूप में करना)।

"शिक्षा, सुरक्षा, संस्कार और सेवा"

इन चार उद्देश्यों के साथ गुरुकुल का संचालन होगा।

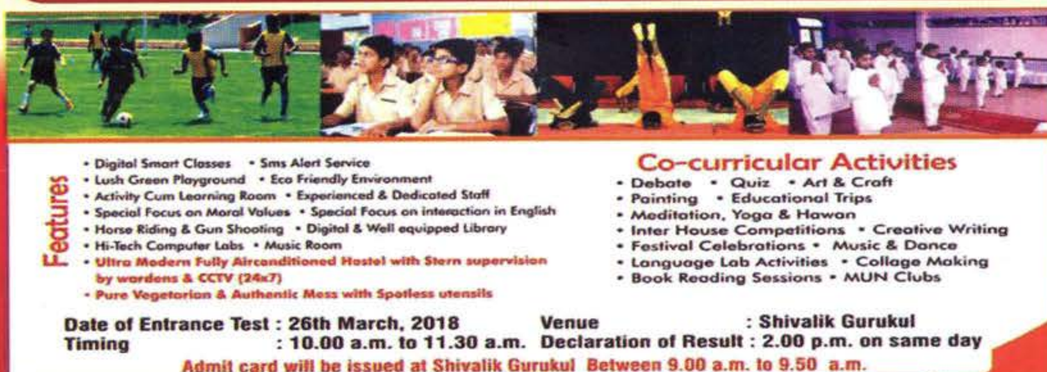

Features

- Digital Smart Classes • Sms Alert Service
- Lush Green Playground • Eco Friendly Environment
- Activity Cum Learning Room • Experienced & Dedicated Staff
- Special Focus on Moral Values • Special Focus on interaction in English
- Horse Riding & Gun Shooting • Digital & Well equipped Library
- Hi-Tech Computer Labs • Music Room
- Ultra Modern Fully Airconditioned Hostel with Stern supervision by wardens & CCTV (24x7)
- Pure Vegetarian & Authentic Mess with Spotless utensils

Co-curricular Activities

- Debate • Quiz • Art & Craft
- Painting • Educational Trips
- Meditation, Yoga & Hawan
- Inter House Competitions • Creative Writing
- Festival Celebrations • Music & Dance
- Language Lab Activities • Collage Making
- Book Reading Sessions • MUN Clubs

Date of Entrance Test : 26th March, 2018
Timing : 10.00 a.m. to 11.30 a.m.
Venue : Shivalik Gurukul
Declaration of Result : 2.00 p.m. on same day

Admit card will be issued at Shivalik Gurukul Between 9.00 a.m. to 9.50 a.m.

Vill Aliyaspur, P.O. Sarawan, Mullana, Ambala (Haryana), E-mail: shivalikgurukul.ambala@gmail.com
Admission Helpline : 8901054781, 9671228002, 8813061212, Website : www.shivalikgurukul.com
Warden Contact No's: 9053720871, 9053720873, 9053720875, 9053720876

अलसस्य कुतो विद्या, अविद्यस्य कुतो धनम्। अधनस्य कुतो मित्रममित्रस्य कुतः सुखम्।

विश्ववारा संस्कृति

आर्य समाज, बी-69, सैक्टर-33, नोएड़ा (उ.प्र.) दूरभाष : 0120-2505731, 9871798221